पढ़ें और सीखें योजना

रवि

जगदीश चंद्रिकेश

विभागीय सहयोग

हीरालाल बाछोतिया

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

नवम्बर 1993
कार्तिक - 1915

PD 10T SD

प्रकाशन सहयोग

सी. एन. राव **अध्यक्ष प्रकाशन विभाग**

प्रभाकर द्विवेदी **मुख्य संपादक**

यू. प्रभाकर राव **मुख्य उत्पादन अधिकारी**
डी. साई प्रसाद **उत्पादन अधिकारी**
चन्द्र प्रकाश टंडन **कला अधिकारी**
विकास मेश्राम **सहायक उत्पादन अधिकारी**
राजेन्द्र चौहान **उत्पादन सहायक**

एन.सी.ई.आर.टी. के प्रकाशन विभाग के कार्यालय

एन.सी.ई.आर.टी. कैम्पस	सी.डब्ल्यू.सी. कैम्पस	नवजीवन ट्रस्ट भवन	सी.डब्ल्यू.सी. कैम्पस
श्री अरविंद मार्ग	चितलापक्कम, क्रोमपेट	डाकघर नवजीवन	32, बी.टी. रोड, सुखचर
नई दिल्ली 110016	मद्रास 600064	अहमदाबाद 380014	24 परगना 743179

रु० 13.50

प्रकाशन विभाग में सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली 110016 द्वारा प्रकाशित तथा कम्पयूग्राफिक, एच-16, ग्रीन पार्क एक्सटेंशन, नई दिल्ली 110016 में कम्पोज होकर इण्डिया ऑफसेट प्रैस, मायापुरी इंडस्ट्रियल एरिया, नई दिल्ली 110064 में मुद्रित।

विद्यालय शिक्षा के सभी स्तरों के लिए अच्छे शिक्षाक्रम, पाठ्यक्रमों और पाठ्यपुस्तकों के निर्माण की दिशा में हमारी परिषद् पिछले पच्चीस वर्षों से कार्य कर रही है। हमारे कार्य का प्रभाव भारत के सभी राज्यों और संघशासित प्रदेशों में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से पड़ा है और इस पर परिषद् के कार्यकर्त्ता संतोष का अनुभव कर सकते हैं।

किंतु हमने देखा है कि अच्छे पाठ्यक्रम और अच्छी पाठ्यपुस्तकों के बावजूद हमारे विद्यार्थियों की रुचि स्वतः पढ़ने की ओर अधिक नहीं बढ़ती। इसका एक मुख्य कारण अवश्य ही हमारी दूषित परीक्षा-प्रणाली है जिसमें पाठ्यपुस्तकों में दिए गए ज्ञान की ही परीक्षा ली जाती है। इस कारण बहुत ही कम विद्यालयों में कोर्स के बाहर की पुस्तकों को पढ़ने के लिए प्रोत्साहन दिया जाता है। लेकिन अतिरिक्त-पठन में बच्चों की रुचि न होने का एक बड़ा कारण यह भी है कि विभिन्न आयुवर्ग के बच्चों के लिए कम मूल्य की अच्छी पुस्तकें पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध भी नहीं हैं। यद्यपि पिछले वर्षों में इस कमी को पूरा करने के लिए कुछ काम प्रारंभ हुआ है। पर वह बहुत ही नाकाफ़ी है।

इस दृष्टि से परिषद् ने बच्चों की पुस्तकों के रूप में लेखन की दिशा में एक महत्त्वाकांक्षी योजना प्रारंभ की है। इसके अंतर्गत, 'पढ़ें और सीखें' शीर्षक से एक पुस्तकमाला तैयार की जा रही है जिसमें विभिन्न आयुवर्ग के बच्चों के लिए सरल भाषा और रोचक शैली में निम्नलिखित विषयों पर बड़ी संख्या में पुस्तकें तैयार की जाएँगी।

(क) शिशुओं के लिए पुस्तकें
(ख) कथा-साहित्य
(ग) जीवनियाँ
(घ) देश-विदेश परिचय
(ङ) सांस्कृतिक विषय
(च) वैज्ञानिक विषय
(छ) सामाजिक विज्ञान के विषय

इन पुस्तकों के निर्माण में हम प्रसिद्ध लेखकों, अनुभवी अध्यापकों और योग्य कलाकारों का सहयोग ले रहे हैं। प्रत्येक पुस्तक के प्रारूप पर भाषा, शैली और विषय-विवेचन की दृष्टि से सामूहिक विचार करके उसे अंतिम रूप दिया जाता है।

परिषद् इस माला की पुस्तकों को लागत मूल्य पर ही प्रकाशित कर रही है ताकि ये देश के हर कोने में पहुँच सकें। भविष्य में इन पुस्तकों को अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद कराने की भी योजना है।

हम आशा करते हैं कि शिक्षाक्रम, पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकों के क्षेत्र में किए गए कार्य की भाँति ही परिषद् की इस योजना का भी व्यापक स्वागत होगा।

प्रस्तुत पुस्तक *राजा रवि वर्मा* के लेखन के लिए डा. जगदीश चंद्रिकेश ने हमारा निमंत्रण स्वीकार किया जिसके लिए हम उनके अत्यंत आभारी हैं। जिन-जिन विद्वानों, अध्यापकों और कलाकारों से इस पुस्तक को अंतिम रूप देने में हमें सहयोग मिला है उनके प्रति मैं कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

हिंदी में 'पढ़ें और सीखें' पुस्तकमाला की यह योजना प्रोफेसर अर्जुन देव के मार्ग-दर्शन में चल रही है। उनके सहयोगियों में श्रीमती संयुक्ता लूदरा, डा. रामजन्म शर्मा, डा. सुरेश पांडेय, डा. हीरालाल बाछोतिया और डा. अनिरुद्ध राय सक्रिय सहयोग दे रहे हैं। विज्ञान की पुस्तकों के लिखन में विज्ञान एवं गणित शिक्षा विभाग के डा. राम दुलार शुक्ल सहयोग दे रहे हैं। मैं अपने सभी सहयोगियों को हार्दिक धन्यवाद और बधाई देता हूँ।

इस माला की पुस्तकों पर बच्चों, अध्यापकों और बच्चों के माता-पिता की प्रतिक्रिया का हम स्वागत करेंगे ताकि इन पुस्तकों को और भी उपयोगी बनाने में हमें सहयोग मिल सके।

डा. के. गोपालन
निदेशक
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

गांधी जी का जन्तर

तुम्हें एक जन्तर देता हूं। जब भी तुम्हें सन्देह हो या तुम्हारा अहम् तुम पर हावी होने लगे, तो यह कसौटी आजमाओ :

जो सबसे गरीब और कमजोर आदमी तुमने देखा हो, उसकी शकल याद करो और अपने दिल से पूछो कि जो कदम उठाने का तुम विचार कर रहे हो, वह उस आदमी के लिए कितना उपयोगी होगा। क्या उससे उसे कुछ लाभ पहुंचेगा ? क्या उससे वह अपने ही जीवन और भाग्य पर कुछ काबू रख सकेगा ? यानि क्या उससे उन करोड़ों लोगों को स्वराज्य मिल सकेगा जिनके पेट भूखे हैं और आत्मा अतृप्त है ?

तब तुम देखोगे कि तुम्हारा सन्देह मिट रहा है और अहम् समाप्त होता जा रहा है।

मदिर की चूने से पुती सफेद दीवार। एक बालक उसे बड़े ध्यान से देख रहा है। पास ही खड़ी है उसकी छोटी बहन। सहसा बालक अपनी बहन से कहता है, "जरा, कोयले का टुकड़ा तो लाना।"

"क्यो ?"

"तुझे घोड़ा बनाकर दिखाता हूं।"

"घोड़ा ? कहा ?"

"अरे, उस दीवार पर। जा, कोयले का टुकड़ा ले आ।"

बहन दौड़ कर कोयले का टुकड़ा तो ले आई, पर वह मन-ही-मन डर भी रही थी। चूने से पुती सफेद दीवार। उस पर बनी कोयले की लकीरें तो दूर से दिखाई दे जाएँगीं। माँ डाटेगीं। मामा नाराज होंगे। पिताजी भी खुश नही होंगे। पर उधर भाई का भी आग्रह था। सो, वह कोयले का टुकड़ा ले आई।

भाई ने कोयले का टुकड़ा हाथ में लिया और दीवार की ओर बढ़ गया। एक रेखा, फिर दूसरी रेखा, फिर रेखाएँ ही रेखाएँ। और इन रेखाओ के बीच उभर आई घोड़े की आकृति। बहन क्षण भर के लिए सारा भय भूल गई। "कितना सुंदर घोड़ा है। लगता है, जैसे अब दौड़ ही पड़ेगा।" उसके मुँह से निकल पड़ा।

भाई ने मुसकराकर उसकी ओर देखा। फिर कहा, "ले, तू भी बना।"

लड़की ने कोयले का टुकड़ा हाथ में ले लिया। वह सोचने लगी, 'मैं क्या बनाऊँ। हाथी, फूल, पत्ती।' तभी उसे अपने घर के सेवक की आवाज सुनायी पड़ी।

"अरे, यह क्या किया? मंदिर की दीवार खराब कर दी। अभी-अभी तो पुताई हुई थी। मै अभी जाकर स्वामी को बतलाता हूँ। तुम लोगों ने दीवार का सत्यानाश कर दिया।"

धमकी देता हुआ वह चला गया।

इधर भाई ने बहन का हाथ पकड़ा। कहा, "डर मत। कुछ नहीं होगा।"

उधर वह स्वामी के पास पहुँचा और उन्हें सारी बात बताई। उसने यह भी आग्रह किया कि वे स्वयं चलकर दीवार की दुर्दशा देख लें।

वे उसे लेकर मंदिर के पास पहुंचे। वहां कोई नहीं था। था तो केवल एक घोड़ा—मदिर की सफेद दीवार पर कोयले से खींची रेखाओं से बना हुआ।

वे एकटक उस घोड़े को देखते रहे और वह अपने स्वामी को। उसे आश्चर्य था। स्वामी क्रोधित क्यों नही हो रहे? वे चुप क्यों हैं?

स्वामी क्रोधित कैसे होते? मदिर की दीवार पर बने घोड़े ने उन्हें आश्चर्य में डाल दिया था। उन्हें विश्वास ही नहीं हो रहा था कि यह घोड़ा उनके भांजे कोच्चू ने बनाया है।

कोच्चू!

हा, यही उस बालक का प्यार का घरेलू नाम था।

उन्होंने सेवक से पूछा, "कोच्चू कहां है?"

"पता नहीं, स्वामी! यहीं तो थे, मंगला बिटिया के साथ।"

"आओ, चलकर ढूंढें। यहीं, कहीं-न-कहीं होंगे।"

और वे दोनों, भाई-बहन को ढूंढ़ने चल पड़े।

स्वामी थे—राजा राज वर्मा। कोच्चू—उनकी बहन का बेटा था। राजा राज

वर्मा स्वयं भी चित्रकारी करते थे। घोड़े की आकृति ने उन्हें बेहद प्रभावित किया था। इसलिए भी कि उसे एक नन्हें बालक ने बनाया था। घोड़े की आकृति पूरी तरह संतुलित थी। कहीं से बेडौल नहीं थी।

राजा राज वर्मा को लगा कि कोच्चू में चित्रकार बनने की प्रतिभा है। बस, आवश्यकता उसे प्रोत्साहन देने की है। सही मार्गदर्शन मिलने की है। उन्होंने निश्चय किया, वे कोच्चू को चित्र बनाने के लिए प्रोत्साहित करेंगे। उसका यथोचित मार्गदर्शन करेंगे। उन्हें विश्वास था, कोच्चू एक दिन अवश्य ही बड़ा चित्रकार बनेगा।

उनका विश्वास मिथ्या नहीं था। सचमुच, कोच्चू एक महान चित्रकार बना। उसे देश में ही नहीं, विदेशों में भी जाना गया। अपार सम्मान और लोकप्रियता मिली। उससे अनेक राजा-महाराजाओं ने चित्र बनवाए और सम्मानित किया। वह इतना लोकप्रिय हुआ कि उसे सम्मान के साथ 'राजा' कहा जाने लगा।

कौन था यह कोच्चू!

कोच्चू का वास्तविक नाम था--रवि वर्मा

भारतीय चित्रकला के इतिहास का एक अमर नाम!

केरल : अपने देश के धुर दक्षिण में स्थित एक छोटा-सा राज्य। आकार में छोटा, लेकिन प्राकृतिक सुषमा से भरपूर। घने बन, नदियाँ, पर्वत, हाथियों के समूह के समूह। साहित्य, कला, सस्कृति–सभी क्षेत्रों में संपन्न। आदि शंकराचार्य इसी प्रदेश के थे। आज भी केरल में साक्षरता कई प्रदेशों से अधिक है।

उसी केरल प्रदेश की राजधानी है तिरुवनन्तपुरम् यानी त्रिवेन्द्रम।

पहले भी तिरुवनन्तपुरम् त्रावणकोर रियासत की राजधानी थी।

तिरुवनन्तपुरम् के चालीस किलोमीटर उत्तर में है किलिमानूर।

किलिमानूर का अर्थ है, तोतों और हरिणों की भूमि।

किलिमानूर का भी एक इतिहास है :

सन् 1728 की बात है। तब त्रावणकोर राज्य की रानी और उनकी एक संतान के प्राण संकट में पड़ गए थे। राज्य के शत्रुओं ने उन्हें घेर लिया था। तभी कोली थाम्पुरन के रवि वर्मा अपने साथियों सहित वहाँ आ पहुंचे। उन्होंने आततायियों को ललकारा। तलवारें खिंच गयीं। रवि वर्मा ने रानी और उनकी संतान को मुक्त करा लिया, पर उन्हें अपने प्राणों की आहुति देनी पड़ी।

त्रावणकोर के नरेश को इसकी सूचना मिली। रानी और संतान के बचने पर उन्हें प्रसन्नता हुई। साथ ही वे दुखी भी हुए। दुखी इसलिए कि रानी और उनकी संतान की रक्षा में एक बीर को अपने प्राणों की आहुति देनी पड़ी। त्रावणकोर नरेश खोये प्राण तो वापस ला नहीं सकते थे। पर वे रवि वर्मा

के प्रति आभार भी व्यक्त करना चाहते थे। उन्होंने उनके छोटे भाई केरल वर्मा को किलिमानूर और उसके आस-पास की भूमि पुरस्कार में दे दी। उस युद्ध में केरल वर्मा भी अपने भाई के साथ-साथ लड़े थे।

इस तरह किलिमानूर में एक नए घराने का शासन हो गया। धीरे-धीरे इस घराने के त्रावणकोर राज घराने से संबंध मजबूत होते गये।

किलिमानूर के शासक कला-प्रिय थे। उन्हें साहित्य में, संगीत में, नृत्य में और चित्रकारी में गहरी रुचि थी।

उन्नीसवीं सदी के मध्य का किलिमानूर ! तब वहाँ राजा राज वर्मा रहा करते थे। राजा राज वर्मा को ललित कलाओं से प्यार था। वे चित्रकारी किया करते थे। उनकी अपनी रंगशाला थी। जहां वे चित्र बनाया करते थे। किलिमानूर में एक मंदिर था। एक टोली भी थी, जो कथकलि नृत्य किया करती थी। राजा राज वर्मा चाहते थे कि लोगों के मन में ललित कलाओं के प्रति रुचि बढ़े।

राजा राज वर्मा की एक बहन थी—उमा अंबा बाई। वे संगीत की जानकार थीं। मलयालम और संस्कृत के पद वे तन्मयता से गाती थीं। उमा के पति थे—नीलकांतन भट्टातिरिपद, वेदों के ज्ञाता, संस्कृत के पंडित। उमा और नीलकांतन की ही संतान थे रवि वर्मा।

रवि वर्मा का जन्म 29 अप्रैल, 1848 को किलिमानूर में ही हुआ था। उनकी एक बहन थी—मंगला और दो भाई थे—राज वर्मा तथा गोदा वर्मा।

कहते हैं, आसपास के वातावरण का मनुष्य पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। रवि वर्मा पर भी किलिमानूर के वातावरण का काफी प्रभाव पड़ा।

कैसा था किलिमानूर का वातावरण?

किलिमानूर का वातावरण पूरी तरह धार्मिक और सांस्कृतिक था। धार्मिक इस अर्थ में कि घरों में, मंदिर में प्रतिदिन पूजा-पाठ होता। पाठशाला में संस्कृत सिखायी जाती। वेदों का अध्ययन कराया जाता। किलिमानूर के जीवन में संस्कृति का भी महत्व था।

राजा राज वर्मा स्वयं चित्रकार थे। वे और लोगों में भी चित्रकला के प्रति रुचि उत्पन्न करना चाहते थे। विशेषकर बच्चों में। किलिमानूर में नर्तकों की एक टोली भी थी। वह समय-समय पर कथकलि नृत्य के कार्यक्रम किया करती थी।

तो ऐसे वातावरण में रवि वर्मा का लालन-पालन हुआ।

पिता संस्कृत के पंडित, चाहते थे कि बेटा संस्कृत का विद्वान बने।

मां संगीतज्ञा थीं। वे रवि वर्मा को उनके शैशवकाल से ही गीत-संगीत सुनाया करती थीं—रागों में बंधे मलयालम के गीत और संस्कृत के पद।

धीरे-धीरे रवि वर्मा पांच वर्ष के हुए। अब तक उन्होंने मलयालम के साथ-साथ संस्कृत भी सीख ली थी। छह वर्ष की अवस्था में रवि वर्मा ने गीत-गायन शुरू कर दिया था।

वे कभी माता-पिता के साथ, कभी बहन के साथ, प्रतिदिन सुबह-शाम मंदिर जाते। मां ने उन्हें गायन सिखा ही दिया था। वे मलयालम और संस्कृत के पद गाते।

रवि वर्मा पर सबसे अधिक प्रभाव अपने मामा का पड़ा। मामा अर्थात, राजा राज वर्मा। राजा राज वर्मा अपनी रंगशाला में चित्र बनाया करते थे। उनके गुरु का नाम था—अलगिरि नायडू। अलगिरि नायडू एक विशेष शैली में चित्र बनाते थे। चित्रकारों ने इस शैली को नाम दिया है—तंजौर शैली। चूंकि, तंजौर के चित्रकार उस शैली के चित्र बनाते थे, इसीलिए इस शैली का नाम तंजौर शैली पड़ गया था।

राजा राज वर्मा को चित्र बनाने का बड़ा शौक था। वे नियमपूर्वक चित्र बनाया करते थे। रवि वर्मा अपने मामा को चित्र बनाते हुए देखते। उन्हें आश्चर्य होता, कैसे बना लेते हैं मामा इतने सुंदर चित्र?

रवि वर्मा को पशु-पक्षियों से बेहद प्यार था। किलिमानूर में उनके घर पर घोड़े, हाथी, गायें और बैल थे। बगीचे के पेड़ों पर तरह-तरह के पक्षी

चहचहाया करते थे। रवि वर्मा उन्हें बड़े ध्यान से देखा करते। पुष्ट बदन वाले घोड़े, कान हिलाते, सूंड से धरती बुहारते हाथी देखकर उनका मन रोमांचित हो उठता। इनकी आकृतियां उनकी कल्पना में घूमा करतीं। तरह-तरह के पक्षी भी उनका ध्यान आकर्षित करते । पेड़ों पर बैठे पक्षी, पंख पसारे उड़ते पक्षी, फुदकते पक्षी—ये सब रवि वर्मा को प्रसन्नता से भर देते।

किलिमानूर में चारों ओर हरियाली थी। नारियल के ऊंचे-ऊंचे पेड़, केले के फलों से लदे-फंदे हरे-हरे वृक्ष—ये सब बरबस उनका ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर लेते।

रवि वर्मा पशुओं को, पक्षियों को बड़े ध्यान से देखते। उनकी शारीरिक बनावट का अध्ययन करते। फिर वे कल्पना में इनके चित्र बनाया करते।

धीरे-धीरे उन्होंने दीवारों पर उनकी आकृतियां बनाना शुरू किया। जब भी अवसर मिलता, कभी अकेले, कभी बहन के साथ दीवारों पर हाथी, घोड़े, फूल, पत्ती, पक्षी बनाने लगते। घर के नौकर जगह-जगह दीवारों पर कोयले से खींची गयी आकृतियां देखते। उन्हें यह सब अच्छा नहीं लगता। वे सोचते, अच्छी-भली दीवारों का कैसा सत्यानाश कर दिया! ये कोच्चू क्या पागल है? और भी तो बच्चे हैं। पर कोई ऐसा नहीं करता। बस, एक कोच्चू ही शैतान है। नौकरों को एक भय और था। कहीं और बच्चे भी कोच्चू की नकल न करने लगें। मंगला ने तो भाई की देखा-देखी दीवारों पर लकीरें खींचनी शुरू कर ही दी थीं।

'कोच्चू'

यही रवि वर्मा का घरेलू नाम था।

नौकर-चाकर कभी-कभी उन्हें झिड़क भी देते थे। स्वामी से शिकायत करने की धमकी भी देते थे।

राजा रवि वर्मा की जीवनियों में उनके बचपन की ऐसी कई घटनाओं का उल्लेख है। मराठी के एक प्रसिद्ध लेखक हैं—श्री रणजीत देसाई। उन्होंने

राजा रवि वर्मा के जीवन पर एक उपन्यास भी लिखा है। उन्होंने भी उक्त घटना का उल्लेख किया है, जिसे हम आरंभ में कह आये हैं।

राजा रवि वर्मा की एक जीवनी उनके जीवन काल में ही प्रकाशित हो गयी थी। यह उनकी प्रथम जीवनी थी। अंग्रेजी में लिखी इस जीवनी का शीर्षक था—'रवि वर्मा—द इंडियन आर्टिस्ट' (रवि वर्मा—भारतीय कलाकार)। इस जीवनी पर लेखक का नाम नहीं है। पर समझा जाता है उसे श्री रामानंद चटरजी ने लिखा था। श्री रामानंद चटरजी एक प्रसिद्ध पत्रकार व कला-शास्त्री थे। वे बंगला भाषा में 'प्रवासी' नामक पत्रिका निकालते थे। अंग्रेजी में भी एक पत्रिका प्रकाशित करते थे। नाम था—'माडर्न रिव्यू'। इन पत्रिकाओं के प्रकाशन के लिए राजा रवि वर्मा ने उनकी काफी सहायता की थी। उन दिनों इन दोनों पत्रिकाओं में राजा रवि वर्मा के बनाये हुए चित्र प्रकाशित हुआ करते थे। उनके बारे में लेख भी छपा करते थे।

'राजा रवि वर्मा—द इंडियन आर्टिस्ट' में उनके बारे में अच्छी जानकारी दी गयी है। एक स्थान पर लेखक ने लिखा है कि 'राजा रवि वर्मा का स्वभाव सौम्य है। वे बहुत दयालु व उदार-हृदय हैं। हमेशा गरीबों की सहायता के लिए तत्पर रहते हैं। उन्हें अपने प्रसिद्ध होने का जरा भी घमंड नहीं है। वे स्वीकार करते हैं—जैसे-जैसे इनका ज्ञान बढ़ता है, उन्हें यह बात अनुभव होती है कि प्रकृति के महान रहस्यों के बारे में वे कितना कम जानते हैं।'

प्रकृति से प्यार

राजा रवि वर्मा को बचपन से ही प्रकृति से प्यार था। वे जब छोटे थे, तभी वे अकसर नीले आकाश को देखा करते। नीला-नीला आकाश। उसमें हाथियों के झुंड की तरह डोलते बादल। रवि वर्मा को सूर्योदय देखना बहुत भाता था। वे सुबह-सुबह उठकर आकाश में सूर्य का उदय होना देखते रहते। इसी तरह सूर्यास्त भी उन्हें आकर्षित करता था। संध्या होते ही वे एक स्थल पर बैठ जाते। पश्चिम में धीरे-धीरे उतरते सूर्य को देखते रहते। एक ओर बढ़ता अंधकार। दूसरी ओर क्षितिज पर डूबते सूर्य की सिंदूरी ललाई। सूर्यास्त के समय आकाश में तरह-तरह के रंग जैसे बिखर पड़ते।

रवि वर्मा कभी-कभी सूर्योदय और सूर्यास्त की भी तुलना करते। कितना अंतर है दोनों में। वे आश्चर्य करते।

रात होती तो आकाश के मैदान में तारों की टोलियों की टोलियां आ धमकतीं। रवि वर्मा इन तारों को घंटों निहारा करते।

प्रकृति उन्हें प्रफुल्लित करती। उन्हें कल्पना के लोक में ले जाती। यही कारण है कि रवि वर्मा जीवन भर प्रकृति से प्यार करते रहे। वे जानते थे कि प्रकृति से हम बहुत कुछ सीख सकते हैं। उससे बहुत कुछ पा सकते हैं। वे देखते थे कि उनके मामा प्रकृति से मिली चीजों से ही रंग बनाते हैं।

राजा राज वर्मा फूलों से, पत्तियों से, वनस्पतियों से तरह-तरह के रंग बनाते थे। वे तरह-तरह के रंगों की मिट्टी भी एकत्र करवाते। फिर बड़े मनोयोग से रंग बनाते।

रवि वर्मा सोचते, उन्हें कब रंग बनाना आयेगा? कब वे अपने चित्रों में मनचाहे रंग भर सकेंगे ? कब तक वे कोयले से दीवारों पर आकृतियां बनाते रहेंगे?

पर रवि वर्मा को अधिक दिन प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ी।

नौकर की शिकायत उनके लिए वरदान सिद्ध हुई।

न नौकर राजा राज वर्मा से उनकी शिकायत करता। न राजा राज वर्मा उनकी कोयले से बनायी गयी आकृति देखते। और न उनके मन में रवि वर्मा को चित्रकारी की विधिवत शिक्षा देने का विचार आता।

राजा राज वर्मा ने एक निश्चय किया । वह अपने भांजे कोच्चू को ही नहीं, अन्य बच्चों को भी चित्रकारी सिखाएंगे। इसके लिए उन्होंने अपनी रंगशाला को स्कूल-जैसा बना दिया। वे बच्चों को रेखाएं खींचना, चित्र बनाना सिखाते। उन्हें बताते कि चित्र बनाते समय किन-किन बातों की ओर ध्यान देना जरूरी है।

रवि वर्मा अपने मामा राजा राज वर्मा की बातें ध्यान से सुनते। रवि वर्मा में एक विशेषता थी। जब वे किसी विषय की ओर ध्यान लगाते तो फिर सब कुछ भूल जाते। बस, एकाग्र चित्त होकर उसी विषय में लगे रहते।

एकाग्र चित्त!

एकाग्र चित्त होकर कार्य करना बड़ा कठिन है। कारण, मन चंचल है। हमेशा पक्षी-सा इधर-उधर उड़ा करता है। उसी कारण बहुत-सी बातों को पूरा करने में देर लगती है। कभी-कभी तो असफल भी होना पड़ता है।

महाभारत की एक कथा है।

आचार्य द्रोण कौरवों व पांडवों को निशाना साधने की शिक्षा दे रहे थे।

उन्होंने एक पेड़ पर एक नकली चिड़िया बैठा दी। फिर उसकी आंख में निशाना साधने के लिए एक-एक कर अपने शिष्यों को बुलाया था।

शिष्य आता तो वे पूछते—

"तुम्हें क्या दिखाई दे रहा है?"

शिष्य उत्तर देता, "आचार्य! पेड़, आकाश, डालें।"

हर शिष्य इसी आशय का उत्तर दे रहा था। आचार्य उससे हट जाने को कहते। अंत में अर्जुन की बारी आयी। आचार्य ने उससे भी यही प्रश्न किया। अर्जुन ने उत्तर दिया, "आचार्य, मुझे केवल चिड़िया की आंख दिखाई दे रही है।"

"बस, तीर चला दो।" आचार्य ने निर्देश दिया।

अर्जुन ने तीर चला दिया। वह ठीक निशाने पर जाकर बैठा।

इस कथा का अर्थ क्या है? यही कि एकाग्र चित्त होने से व्यक्ति अपने लक्ष्य को बेध सकता है।

अर्जुन एकाग्र चित्त होकर निशाना साध रहा था। वहां केवल चिड़िया की आंख ही दिखायी दे रही थी। इसीलिए वह सफल भी हुआ।

आचार्य द्रोण के अन्य शिष्यों का मन चंचल था। उन्हें पेड़ दिखाई दे रहा था, डालें दिखायी दे रही थीं, चिड़िया भी दिखायी दे रही थी। पर आवश्यकता तो केवल उसकी आंख देखने की थी।

रवि वर्मा भी प्रत्येक कार्य ध्यान लगा कर करते थे। फिर उन्हें कोई और बात नही सूझती थी।

इसी कारण, वे शीघ्र ही अच्छे चित्र बनाने लगे। यह देखकर राजा राज वर्मा बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने धीरे-धीरे रवि वर्मा को चित्रकला की बारीकियां सिखानी शुरू कीं। फलक पर रेखांकन किस तरह किया जाता है, यह सिखाया। रंग किस तरह भरे जाते हैं, यह बताया। किन-किन वस्तुओं से रंग बनते हैं, यह कला भी सिखायी। किन-किन रंगों को मिलाने से कौन-सा नया रंग तैयार हो जाता है, वह तरीका भी समझाया।

रवि वर्मा तेजी से यह सब सीखने लगे। अब वे चित्र भी बनाने लगे। उनमें रंग भी भरने लगे।

उन्हें अपने मामा राजा राज वर्मा की सीखें याद थीं।

चित्रकला सिखाना शुरू करने के पूर्व एक दिन मामा ने उनसे कहा था—'रवि, मनुष्य को केवल सिखा देने से कुछ नहीं आता। कुछ गुण उसमें जन्मजात होते हैं। मैं तुझे रंग बनाना सिखाऊंगा। पत्ते, फूल, जड़ें, रासायनिक द्रव्य और अनेक रंग की मिट्टी से रंग तैयार होते हैं। लेकिन एक बात इनसे भी ज्यादा जरूरी है। अपनी मरजी का रंग तो कलाकार को स्वयं खोजना पड़ता है। उसके लिए केवल आंखें ही नहीं बल्कि, अंतर्दृष्टि की भी जरूरत पड़ती है।'

फिर मामा राजा राज वर्मा ने आगे कहा था।

'आंखें केवल देखती हैं। जो दिखता है, उसे समझती हैं अंतर्दृष्टि।'

इसके साथ ही मामा ने कुछ शर्तें भी जोड़ी थीं। यह कि वे अब से किसी दीवार पर लकीर नहीं खींचेंगे। पाठशाला में वेदों का अध्ययन नियमित रूप से करेंगे। रात में नृत्यशाला में सिखाया पाठ परिश्रमपूर्वक तैयार करेंगे।

रवि वर्मा ने ये सब शर्तें स्वीकार कर ली थीं। फलतः सब उनसे प्रसन्न थे।

एक दिन की बात है।

राजा राज वर्मा रवि वर्मा के बनाये कुछ चित्रों को लेकर अपनी बहन उमा के पास गये। वे रवि वर्मा की मां भी थीं।

राजा राज वर्मा ने अपनी बहन से कहा, "देखो उमा, रवि ने कितने सुंदर चित्र बनाये हैं। इतनी छोटी उम्र में इतना कुशल चित्रकार। इस प्रकार की सुंदर रंग-संगति! यह बहुत कठिन काम है। पर तुम्हारे बेटे ने यह सब सीख लिया है। उमा, तुम्हारा बेटा बड़ा गुणी है। एक दिन वह बड़ा चित्रकार बनेगा। बस, उसे अवसर मिलना चाहिए।"

मां ने बेटे के बनाये चित्र देखे। वे प्रसन्न हो उठीं। उनका मन गर्व से भर गया। रवि वर्मा के पिता नीलकांतन भी उस समय वहाँ थे। उन्हें रवि वर्मा का चित्रकार बनना जरा नहीं सुहा रहा था। उन्होंने तीखे स्वरों में कहा, "रवि चित्रकार बन गया तो क्या होगा?"

राजा राज वर्मा हंस पड़े। उन्होंने उन्हें समझाया कि चित्रकार बनना कोई बुरी बात नहीं है। वह भी एक कला है। फिर वे तरह-तरह के तर्क देकर नीलकांतन को समझाते रहे। उनके तर्कों के सामने नीलकांतन कुछ बोल नहीं पाये।

इस तरह दिन बीत रहे थे।

रवि वर्मा की चित्रकला में दिन-प्रतिदिन निखार आता जा रहा था।

रवि वर्मा अब तेरह वर्ष के किशोर थे। उनका हाथ सध गया था। उनकी कल्पना चित्र-फलक पर भलीभांति उतरने लगी थी।

तभी एक घटना घट गयी। हुआ यह कि त्रावणकोर के नरेश ने राजा राज वर्मा को तिरुवनन्तपुरम् आने के लिए संदेश भेजा। यह राजाज्ञा थी। टाला जाना कठिन था। राजा राज वर्मा स्वयं भी तिरुवनन्तपुरम् जाने का विचार कर रहे थे। त्रावणकोर नरेश के संदेश ने उनका उत्साह और बढ़ा दिया था। त्रावणकोर नरेश ने संदेश भिजवाया था कि यदि घराने में कोई अच्छा लड़का हो, तो साथ में उसे भी लेते आयें। यह संदेश पाते ही राजा राज वर्मा की आँखो में रवि वर्मा का चेहरा घूम गया। वह उपयुक्त रहेगा! कोच्चू सुशील है, सुशिक्षित है, ललित कलाओं का उसे ज्ञान है। वह गायन जानता है, कथकलि नृत्य भी जानता है। यही नहीं, चित्रकार भी है। त्रावणकोर नरेश उससे अवश्य प्रभावित होगे। राजा राज वर्मा ने निश्चय कर लिया। वे कोच्चू को भी तिरुवनन्तपुरम् ले जायेगे। पर बहन उमा से पूछना आवश्यक था। आखिर, कोच्चू उनका ही तो बेटा था।

राजा राज वर्मा बहन के पास गये। उन्हें बताया कि तिरुवनन्तपुरम् पहुंचने का निमंत्रण मिला है। त्रावणकोर नरेश ने बुलाया है। साथ ही एक और संदेश भेजा है। घराने मे कोई अच्छा लड़का हो, तो उसे भी साथ ले आयें।

"फिर", बहन उमा ने पूछा।

"फिर क्या! जाना तो पड़ेगा ही। सोचता हूं, साथ में कोच्चू को भी ले

जाऊं। तिरुवनन्तपुरम् पहुंचकर वह कुछ सीखेगा ही। यहां किलिमानूर में, जो कुछ सीखना था, वह सीख चुका। तिरुवनन्तपुरम् में उसका नये-नये लोगों से परिचय होगा। उसे नये-नये अनुभव होंगे और इन अनुभवों से उसे जो ज्ञान मिलेगा, वह स्थायी होगा। उनसे उसे लाभ ही मिलेगा।"

उमा क्या कहती! भाई की बात काट भी नहीं सकती थी। उन्होंने बेटे की यात्रा की तैयारियां शुरू कर दीं। उसके लिए नये-नये वस्त्र सिलवा दिये।

और एक दिन रवि वर्मा अपने मामा के साथ तिरुवनन्तपुरम् की यात्रा पर चल दिये।

किलिमानूर से तिरुवनन्तपुरम्

सजी-धजी, आरामदेह बैलगाड़ी। पगडंडी पर दौड़ते बैल, उनके गले में बंधी घंटियों की टुन-टुन।

रवि वर्मा तरह-तरह की कल्पनाओं में डूब गये। इसके पूर्व वे कभी तिरुवनन्तपुरम् नहीं गये थे। कैसा होगा तिरुवनन्तपुरम्! कैसे होंगे वहां के लोग! कैसे होंगे त्रावणकोर के नरेश! रवि वर्मा सारे रास्ते तरह-तरह की कल्पनाओं में डूबते-उतरते रहे। कभी-कभी किसी पक्षी को देखकर उनका मन प्रफुल्लित हो उठता। सोचते, कितने स्वाधीन हैं ये पक्षी। जब मन चाहा पंख पसारा और उड़ चले आकाश में।

राह में मामा राजा राज वर्मा उन्हें त्रावणकोर नरेश के बारे में बताते रहे। उन्होंने बताया, त्रावणकोर नरेश का नाम है—आयिल्यम तिरुनाल। वे कला-प्रेमी हैं। कला की परख करना जानते हैं। वे उदार भी हैं। उनसे मिलते समय घबराना नहीं। जो पूछें, विनम्रता से निर्भीकतापूर्वक उत्तर देना।

इसी तरह की और भी सीखें।

धीरे-धीरे रास्ता कटता गया। तिरुवनन्तपुरम् पास आता गया।

और कुछ समय बाद वे तिरुवनन्तपुरम् में थे।

धीरे-धीरे बैलगाड़ियां राजमहल के विशाल अहाते के द्वार के पास जाकर रुक गयीं। इस अहाते में किलिमानूर घराने की एक हवेली थी—भदात मदहोम। किलिमानूर घराने के लोग तिरुवनन्तपुरम् आते, तो वहीं ठहरते थे।

राजा राज वर्मा इसी हवेली की ओर बढ़े। इसी बीच उन्होंने त्रावणकोर नरेश के पास अपने आगमन की सूचना भिजवा दी।

भदात मदहोम एक सुंदर हवेली थी। उसमें सब तरह का आराम था। राजा राज वर्मा अपने भांजे और सेवकों के साथ उसी में ठहर गये।

अगले दिन राजा राज वर्मा रवि को लेकर राजमहल में गये। इसके पूर्व रवि वर्मा ने कभी कोई राज प्रासाद नहीं देखा था। विशाल कक्ष। झाड़-फानूसों से सजे-धजे। ऊँचे-ऊँचे स्तंभ। सुंदर मेहराबे। सब कुछ भव्य और आकर्षक।

लेकिन रवि वर्मा को इन सबसे भव्य लगा, राजा आयिल्यम तिरुनाल का व्यक्तित्व। गोल चेहरा, बड़े-बड़े नेत्र, पीछे की ओर काढ़े गये काले रेशम—जैसे केश। शरीर पर अगरखा। गले में मोतियों की माला। राजा आयिल्यम तिरुनाल ने मुसकराकर राजा राज वर्मा की ओर देखा। मानो पूछना चाह रहे थे—'आनंद से तो हो।' उनकी दृष्टि रवि वर्मा पर भी पड़ी।

तभी राजा राज वर्मा ने विनम्रता से झुककर अभिवादन किया। रवि वर्मा ने भी मामा का अनुकरण किया। झुककर नमस्कार के लिए हाथ जोड़ दिये।

राजा आयिल्यम तिरुनाल ने कहा, "राजा राज वर्मा, हमारा संदेश पाकर

आप आये, यह अच्छा किया। हां, यह बालक कौन है?" रवि वर्मा की ओर देखते हुए उन्होंने पूछा।

"महाराज, यह मेरा भांजा रवि है। मेरी बहन उमांबा का पुत्र। इसे भी मैं आपके दर्शनों के लिए साथ लेता आया।" राजा राज वर्मा ने विनम्रता से कहा।

"अच्छा किया।" राजा आयिल्यम तिरुनाल ने स्नेह भरे स्वरों में कहा।

कुछ देर बातचीत करने के पश्चात राजा राज वर्मा रवि के साथ हवेली लौट आये।

राजमहल के पास ही एक मंदिर था। पद्मनाभ स्वामी का। यह मंदिर बहुत ही भव्य था। उसका गोपुरम् सात मंजिल का था। प्रत्येक मंजिल पर देवी-देवताओ की सुंदर मूर्तियां थीं। मंदिर में एक प्रदक्षिणा-पथ भी था। उसके दोनों ओर सुंदर स्तंभ थे। इन स्तंभों पर स्त्रियों की सुंदर प्रतिमाएं थीं। ये प्रतिमाएं हाथों में दीपक लिये हुए थीं। मंदिर के निकट ही एक विशाल जलाशय था। चारों ओर सीढ़ियों से बंधा।

रवि वर्मा के लिएं यह एक नया संसार था। चारों ओर राजसी वैभव बिखरा हुआ था। चार दिन कैसे बीत गये, उन्हें पता ही नहीं लगा। अब पुनः किलिमानूर लौटना था।

किलिमानूर लौटने के पूर्व राजा राज वर्मा महाराज तिरुनाल से मिलने गये। महाराजा ने प्रेम से उनका स्वागत किया। फिर खिन्न स्वरों में बोले, "राजा राज वर्मा, खेद है कि संबंध जुड़ नहीं पायेगा। यह सब कहते हुए मुझे संकोच हो रहा है।"

"महाराज, निस्संकोच कहिए। मुझे किंचित दुःख नहीं होगा।" राजा राज वर्मा ने विनम्रता से कहा।

"राजा राज वर्मा, मुझे तो आपका भांजा रवि वर्मा बहुत पसंद आया।

वह प्रतिभा संपन्न है, विनम्र है। उसका रंग जरूर सांवला है, पर वह है रूपवान। लेकिन राजघराने की स्त्रियो ने केवल उसका रंग ही देखा। वे इसी कारण विवाह-संबंध नहीं जोड़ना चाहतीं। मेरा बस चलता तो मैं अवश्य रवि का विवाह तुरंत कर देता।" महाराजा ने कहा।

राजा राज वर्मा ने कहा, "महाराज, रवि पर आपकी कृपा भर चाहिए। राजघराने में उसका विवाह-संबंध हो या न हो, यह विशेष महत्त्वपूर्ण नही। वह एक होनहार बालक है। मलयालम, संस्कृत जानता है। चित्रकारी के प्रति उसका बचपन से झुकाव है। आपकी छत्रछाया में रहेगा। उसका विकास ही होगा। किलिमानूर छोटी जगह है। वहा वह जो सीख सकता था, सीख चुका। अब तो तिरुवनन्तपुरम् में ही उसकी प्रतिभा को निखार मिलेगा।"

महाराजा तिरुनाल कुछ क्षण सोचते रहे। फिर बोले, "ठीक है। मैं तुम्हें शीघ्र ही सदेश भेजूंगा।"

महाराज तिरुनाल से विदा लेकर राजा राज वर्मा भदात मद्होम लौट आये। सेवकों से किलिमानूर लौटने की तैयारी करने को कहा।

अब फिर वही बैलगाड़ी से यात्रा। रवि वर्मा को घर लौटने की खुशी थी। वे लपककर बैलगाड़ी में जा बैठे।

गाड़ीवान ने बैलों को हुकारा। रास खींची। बैल दौड़ पड़े। उनके गले में बंधी घटियां टुनटुना उठी।

धीरे-धीरे तिरुवनन्तपुरम् की ऊंची-ऊंची इमारतें आंखों से ओझल होने लगीं।

किलिमानूर लौटकर रवि वर्मा प्रफुल्लित हो उठे। अपना घर, आखिर अपना घर होता है। उसकी दीवारें प्राणहीन होती हैं, फिर भी लगता है, जैसे वे प्राणवान हैं। हमारे सुख-दुख की संगी-साथी हैं। किलिमानूर के चप्पे-चप्पे से रवि वर्मा को प्यार था। उन्होंने मंगला को राज प्रासाद के बारे में बताया। महाराजा आयिल्यम तिरुनाल के स्वभाव की प्रशंसा की। उसे यह भी बताया कि पद्मनाभ स्वामी का मदिर कितना भव्य है। उसके गोपुरम् में कितनी सुंदर मूर्तियां हैं। मां को भी उन्होंने यही बातें बतलायीं। अपने दोस्तों को भी तिरुवनन्तपुरम् के संस्मरण सुनाये।

किलिमानूर में रवि वर्मा ने फिर वही दिनचर्या अपना ली। प्रातः वही वेदों का अध्ययन, फिर चित्रकारी। रात कथकलि का अभ्यास।

रवि वर्मा अधिक दिनो तक किलिमानूर में नहीं रह पाये।

कुछ समय बाद फिर से महाराजा तिरुनाल का संदेश आया। उन्होंने रवि वर्मा को तिरुवनन्तपुरम् बुलवाया था।

हुआ यह था कि महाराजा आयिल्यम तिरुनाल रवि वर्मा से बेहद प्रभावित हुए थे। वे चाहते थे कि उनके संरक्षण में रवि वर्मा प्रगति करे।

एक दिन फिर तिरुवनन्तपुरम् की यात्रा शुरू हुई। इस बार फिर रवि वर्मा अपने बनाये तीन चित्र भी साथ ले गये। ये चित्र वे महाराजा तिरुनाल को भेंट करना चाहते थे।

रास्ते भर रवि वर्मा तरह-तरह की कल्पनाओं में खोये रहे।

बैलगाड़ी पगडंडी पर दौड़ रही थी। बैलों के गले में बंधी घंटियां टुनटुना कर एक मधुर संगीत पैदा कर रही थीं। अब तिरुवनन्तपुरम् का रास्ता जाना-पहचाना लग रहा था। रास्ते में खड़े पेड़ परिचित मालूम पड़ रहे थे।

तिरुवनन्तपुरम् पहुंचकर वे सब भदात मदहोम में ही ठहरे। तिरुवनन्तपुरम् में वही तो किलिमानूर घराने की हवेली थी।

दूसरे दिन राजा राज वर्मा रवि वर्मा के साथ महाराजा तिरुनाल से मिलने गये। महाराजा ने उनका स्नेह से स्वागत किया। कुशल-क्षेम पूछी। रवि वर्मा ने भी महाराजा को विनम्रतापूर्वक नमस्कार किया। फिर अपने बनाये तीनों चित्र महाराजा को भेंट किये।

महाराजा ने तीनों चित्रों को बड़े चाव से देखा। इनमें से दो चित्र देवियों के थे। तीसरा चित्र एक शिशु का था।

महाराजा कला के पारखी थे। चित्र देखकर वे प्रभावित हुए। उन्हें आश्चर्य हुआ, चौदह वर्ष का यह बालक और चित्र ऐसे, जैसे किसी अनुभवी, कुशल चित्रकार ने बनाये हों। उन्होंने प्रशंसा भरी नजरों से रवि वर्मा की ओर देखा। इन चित्रों की प्रशंसा की।

राजा राज वर्मा ने कहा, "महाराज, आप कला के पारखी हैं। चित्रकला के ज्ञाता हैं। आपने जान ही लिया होगा। इस किशोर में प्रतिभा है। योग्य गुरु इसकी चित्रकला को और निखार सकता है। मैं तो साधारण चित्रकार हूं। जो कुछ भी मुझे आता था, मैंने इसे सिखा दिया। अब इस पर आपकी कृपा हो जाए। आपके संरक्षण में यह बहुत उन्नति करेगा, मुझे पूरा विश्वास है।"

महाराजा आयिल्यम तिरुनाल ने मुस्कराकर कहा, "राजा राज वर्मा, अब आपका भांजा रवि मेरे संरक्षण में है। आप चिंता न करें। अपने यहां रंगशाला है। राज चित्रकार है। बाहर के भी चित्रकार आते रहते हैं। अपने ग्रंथालय में चित्रकला पर बहुत-सी पुस्तकें हैं। रवि को इन सब का लाभ मिलेगा। आप निश्चिंत रहें।"

रवि वर्मा के जीवन का अब एक नया अध्याय शुरू हुआ।

अब तिरुवनन्तपुरम् ही उनका नया घर था।

राजा राज वर्मा ने हवेली में रवि वर्मा के निवास की पूरी व्यवस्था करा दी। फिर वे एक दिन किलिमानूर लौट गये।

जाने के पूर्व उन्होंने रवि वर्मा से कहा, "बेटा, यह तुम्हें नया अवसर मिला है। इसके क्षण-क्षण का उपयोग करना। एक बात ध्यान रखना। विनम्र रह कर ही बहुत कुछ सीखा जा सकता है। ज्ञान तो आकाश की भांति है। उसकी कोई सीमा नहीं। अपनी कला पर कभी घमंड न करना। यह न सोचना कि तुम्हें सब कुछ आ गया है। कारण, एक पूरा जीवन भी कम है, किसी कला को सीखने के लिए।"

यह कहते-कहते राजा राज वर्मा का गला भर आया। रवि वर्मा से उन्हें बेहद प्यार था।

रवि वर्मा भी भावुक हो उठे।

मामा किलिमानूर जा रहे हैं। अब यहां अकेला ही रहना पड़ेगा। क्षणभर के लिए उनका मन आशंका से भर उठा। पर उन्होंने स्वयं को संभाला। कुछ पाने के लिए कुछ न कुछ खोना पड़ता है। अगले क्षण उनका आत्मविश्वास लौट आया। बोले, "मामाजी, आप मेरे गुरु हैं। मैं आपकी बातों को सदा ध्यान मे रखूंगा। आपकी बतायी सीखों पर चलूंगा। मै प्रयत्न करूंगा कि यहां जितना ज्ञान प्राप्त कर सकूं, कर लूं।"

मामा राजा राज वर्मा ने कहा, "रवि, हर चुनौती का हँसकर सामना करना। विपत्ति को मित्र समझना। हर अभिशाप में एक वरदान भी छिपा होता है। विपत्तियां तो हमें कुछ सिखाने आती हैं। उनसे जूझकर हम नयी शक्ति पाते हैं।"

इस तरह समझा-बुझाकर राजा राज वर्मा किलिमानूर लौट गये।

अब इस भव्य हवेली मे रवि वर्मा अकेले रह गये। बड़े-बड़े कक्ष उन्हें अभी पराये ही लग रहे थे। अभी उनसे आत्मीयता नहीं हुई थी।

अकेलेपन में रवि वर्मा को किलिमानूर की बहुत याद आती थी। मां की, मंगला की, पिता की, मित्रो की याद कर उनका मन उदास हो जाता। अपनी उदासी मिटाने के लिए वे पद्मनाभ स्वामी के मंदिर में चले जाया करते। वहा की मूर्तियों को देखा करते। कभी-कभी वे विशाल सरोवर की सीढ़ियो पर बैठ जाते। उसके जल मे तैरता मंदिर का प्रतिबिंब उन्हें बेहद भला लगता। वे सोचते, यदि इस दृश्य को चित्र में उतार लिया जाए तो!

और चित्र, चित्रकला की बात याद आते ही उनका अकेलापन दूर हो जाता। वे सोचते, एक लक्ष्य की प्राप्ति के लिए ही तो उन्होंने घर छोड़ा है। माता-पिता, बहन, मामा, मित्रो से अलग हुए हैं। यह विचार आते ही उनकी उदासी दूर हो जाती। वे अपने में एक नयी स्फूर्ति अनुभव करने लगते।

महाराजा आयिल्यम तिरुनाल जानते थे कि उन्होंने बहुत बड़ा उत्तरदायित्व ओढ़ा है। एक किशोर को उसके घर से अलग किया है। अब उसकी शिक्षा-दीक्षा, उसके सुख-दुःख का भार उन्हीं पर है। उन्होंने निश्चय किया, वे रवि वर्मा का मार्गदर्शन करेंगे। वयस्क होकर वह एक अच्छा चित्रकार बने, इसके लिए सारे प्रयत्न करेंगे।

महाराज आयिल्यम तिरुनाल ने राज-दरबार में एक राज-चित्रकार नियुक्त किया था। नाम था – रामस्वामी नायकर। महाराजा ने रामस्वामी नायकर को बुलवाया। वे आये तो निर्देश दिया, "किलिमानूर से एक किशोर आया है।

वह राजा राज वर्मा का भांजा है। चित्रकार बनना चाहता है। राजा राज वर्मा उसे जितना सिखा सकते थे, उतना उन्होंने सिखा दिया। मैं सोचता हूँ कि अब आप उसे सिखाएं। किशोर होनहार है। उसे चित्रकला का ज्ञान है। उसके हाथ में सफाई है। आपके मार्गदर्शन में वह अवश्य उन्नति करेगा। मुझे पूरा विश्वास है।"

रामस्वामी नायकर ने कहा, "जो आज्ञा, महाराज!"

दूसरे दिन से रवि वर्मा रामस्वामी नायकर के पास जाने लगे। वे राजकीय रंगशाला में जाते। रामस्वामी नायकर को प्रणाम कर एक ओर बैठ जाते। रामस्वामी नायकर का एक शिष्य था—आर्मुखम पिल्लई। शीघ्र ही आर्मुखम से रवि वर्मा की मित्रता हो गयी।

रामस्वामी ने महाराजा की आज्ञा तो मान ली थी, पर रवि वर्मा को कुछ सिखाने का उसका कोई विचार न था। चौदह वर्ष का किशोर उन्हें अपना प्रतिस्पर्धी नजर आता। अब रवि वर्मा की प्रतिभा उन्हें खलने लगी थी। कारण, उनके मन में ईर्ष्या ने जन्म ले लिया था।

ईर्ष्या!

ईर्ष्या व्यक्ति के गुणों का नाश कर देती है। ईर्ष्यालु व्यक्ति हमेशा चिंताओं में घुलता रहता है। उसे मित्र भी शत्रु नजर आने लगते हैं। और रवि वर्मा तो रामस्वामी के मित्र भी नहीं थे। ईर्ष्या तो आत्मीय सबधों में भी दरार डाल देती है।

रामस्वामी को रवि वर्मा जरा भी नही सुहाते। वह बात-बात पर उनकी गलती निकाला करते। कभी-कभी झिड़क भी देते। वे रवि वर्मा को कुछ सिखाना ही नहीं चाहते थे।

रामस्वामी घर से ही रंग तैयार कर लाते थे। इसका भी एक कारण था। वह नहीं चाहते थे कि रवि वर्मा को रंग बनाना आ जाए। वह रंगों की संगति बैठाना जान जाएं।

रवि वर्मा को उनकी इस भावना का पता नही था। वे समझते थे, गुरूजी

स्वभाव से क्रोधी हैं। इसीलिए उन्हें बात-बात पर झिड़क देते हैं। लेकिन गुरू की झिड़की तो लाभ के लिए ही होती है।

रहीम का एक दोहा है—

खैर, खून, खांसी, खुशी, बैर-प्रीति मधुपान।
रहिमन दाबै न दबै जानत सकल जहान॥

अर्थात्,

कत्थे का रंग, खून, खांसी, प्रसन्नता, शत्रुता, प्यार-स्नेह और शराब का नशा—ये सब छिपाये नहीं छिपते। लोग जान ही जाते हैं।

रामस्वामी नायकर के मन मे छिपी ईर्ष्या की भावना भी छिपी नहीं रह सकी। ईर्ष्या से ही बैर का जन्म होता है।

रवि वर्मा तो किशोर थे। वे रामस्वामी नायकर की भावना समझ नहीं पाये। हां, महाराजा आयिल्यम तिरुनाल ने अवश्य भांप लिया। राज-चित्रकार अपने किशोर शिष्य को कुछ सिखा नहीं रहा है। उन्होंने संकेत से रामस्वामी नायकर को समझाया भी। लेकिन रामस्वामी का स्वभाव नहीं बदला।

महाराजा तिरुनाल ने सोचा, रामस्वामी से कुछ कहना व्यर्थ है। उन्होंने स्वयं रवि वर्मा की सहायता करने का निश्चय किया। वे जानते थे कि रवि वर्मा रंग बनाना सीखना चाहता है। रामस्वामी उसे रंग बनाना सिखाएंगे नहीं। क्यों नहीं, उसे बने-बनाये रंग ही दे दिये जाएं।

और महाराजा तिरुनाल ने यही किया। उन्होंने बाजार से चित्रकला के रंग मंगवाये। रंग आ गये तो उन्होंने रवि वर्मा को बुलवाया।

महाराजा का संदेश मिलते ही रवि वर्मा महल में पहुंचे। महाराजा ने उन्हें रंगो की पेटिका दी। कहा, "रवि, अब तुम्हें रंगों की कमी नहीं रहेगी। जाओ, सुंदर चित्र बनाओ।"

रंग पाकर रवि वर्मा बहुत खुश हुए। उन्होंने महाराजा को प्रणाम किया और रंग-पेटिका लेकर हवेली वापस आ गये।

८. एक सच्चा मित्र

रंग पाकर रवि वर्मा प्रसन्न थे। अब वे इन रंगों से चित्र बनाने लगे। वे प्रतिदिन की भांति रामस्वामी नायकर के पास भी जाते थे। रामस्वामी का स्वभाव अभी भी नहीं बदला था। वे अक्सर उन्हें झिड़क देते थे। कभी-कभी गुरू के इस व्यवहार से उनका मन खिन्न हो जाता। उन्हें उदासी घेर लेती। तब रामस्वामी का शिष्य आर्मुखम पिल्लई उन्हें धैर्य बंधाता।

एक दिन आर्मुखम पिल्लई ने रवि वर्मा से कहा, "गुरूजी के व्यवहार से तुम निराश न हो। कुछ लोग ऐसे होते हैं, जो औरों को अपनी कला सिखाना नहीं चाहते। वे उसे गुप्त रखना चाहते हैं। उन्हें भय होता है कि कहीं सीखने वाला उनसे आगे न निकल जाए। पर तुम चिंता न करो। मुझे जो कुछ भी आता है, उसे मैं तुम्हें सिखाऊँगा। ऐसा करूंगा, रात को तुम्हारी हवेली आ जाया करूंगा। इससे गुरूजी को भी पता नहीं लगेगा।"

रवि वर्मा को आर्मुखम की यह योजना पसंद आ गयी। उन्होंने कहा, "आर्मुखम, तुम सच्चे मित्र हो। मैं हर रात तुम्हारी प्रतीक्षा किया करूंगा।"

आर्मुखम वचन का धनी था। वह रामस्वामी नायकर का सारा कार्य करके रात को भदात मदहोम जाता। वहां रवि वर्मा को चित्रकला के बारे में बताता। रवि वर्मा के मन में कई संदेह होते। कई समस्याएं होतीं। वे आर्मुखम से निस्संकोच पूछते। आर्मुखम भी निष्कपट भाव से उनका उत्तर देता। फल अच्छा ही हुआ। चित्रकला के बारे में रवि वर्मा की समझ बढ़ने लगी।

एक दिन की बात है। महाराजा आयिल्यम तिरुनाल ने रवि वर्मा को महल में बुलवाया। रवि वर्मा तुरंत गये। महाराजा को प्रणाम किया।

महाराजा ने रवि वर्मा को स्नेह से बैठने के लिए कहा। फिर उन्होंने उन्हें कुछ चित्र भेट किये। ये चित्र यूरोपीय चित्रकारों के थे, विशेषकर इतालवी चित्रकारो के।

एक मलयाली युवती

(साभार : श्री भवानी चित्र संग्रहालय, औंध, सतारा)

चित्र पाकर रवि वर्मा की प्रसन्नता की सीमा न रही। महाराजा ने कहा, "रवि, ये चित्र तुम्हारे लिए हैं। घर ले जाकर इन्हें ध्यान से देखो। सोचो, चित्रकार ने किस तरह कल्पना की होगी, कैसे ये चित्र बनाये होंगे। कैसे इनमें रंग भरे होंगे। यह भी देखो कि चित्रकार ने किसी खास जगह के लिए कोई खास रंग ही क्यों चुना है! क्या कोई कारण होगा! ये महान चित्रकारों के मूल-चित्रों की छपी हुई अनुकृतियां हैं। अब तुम भी इनकी अनुकृति करने का प्रयत्न करो।"

क्षण भर रुककर महाराजा तिरुनाल ने कहा, "रवि, अभ्यास ही सबसे बड़ा गुरू है। सतत अभ्यास करते रहो। एकलव्य की कथा तो याद है।"

"जी महाराज!" रवि वर्मा ने उत्तर दिया।

"तो जब एकलव्य केवल गुरू का ध्यान कर, निरंतर अभ्यास कर, धनुर्धर बन सकता है, तो तुम भी चित्रकार बन सकते हो। जाओ!" महाराजा तिरुनाल ने स्नेह से कहा।

रवि वर्मा वे सारे चित्र लेकर अपनी हवेली में आ गये।

हवेली में आकर उन्होंने ध्यान से एक-एक चित्र देखना शुरू किया।

ओह! कितने सुंदर चित्र हैं।

कितना सुंदर रंग प्रयोग है।

रवि वर्मा मन ही मन सोचते।

चित्र ही उनके गुरू थे! रवि वर्मा ने राज-चित्रकार रामस्वामी नायकर से तैलरंगों के प्रयोग की जानकारी चाही थी। वे उनसे चित्रकला की नयी तकनीक सीखना चाहते थे। पर रामस्वामी से उन्हें निराशा ही मिली थी। हां, आर्मुखम पिल्लई ने अवश्य कुछ सिखाया था।

पहले मामा राजा राज वर्मा।

फिर आर्मुखम पिल्लई।

और अब ये चित्र!

रवि वर्मा इन विदेशी चित्रों की अनुकृतियां बनाने लगे।

एक दिन महाराजा तिरुनाल के पुस्तकालय में उन्हें एक पुस्तक मिली। पुस्तक का नाम था—'द हिंदू पैथन।' इसके लेखक और चित्रकार थे—मेजर एडवर्ड मूर। इस पुस्तक में छपे कुछ चित्र रवि वर्मा को बहुत भाये।

इसमें एक चित्र सूर्य देवता का था।

सात अश्वों के रथ पर सवार सूर्य। हाथ में सातों अश्वों की वल्गा अर्थात रास।

इस चित्र में लाल, सिंदूरी, पीले रंगों का अद्भुत प्रयोग किया गया था। रवि वर्मा काफी देर तक इस चित्र को देखते रहे।

इस पुस्तक में एक और चित्र था—कृष्ण को दूध पिलाती देवकी का। इस चित्र को देखकर रवि वर्मा रोमांचित हो उठे।

देवकी के चेहरे पर वात्सल्य भाव उमड़ा पड़ रहा था। कृष्ण का भोला मुख पुलकित कर देता था।

रवि वर्मा सोचते, कैसे हैं ये चित्रकार, जो इतने सुंदर भावना-प्रधान चित्र बना लेते हैं।

फिर उनके मन में संकल्प जन्म लेता। वे भी ऐसे ही सुंदर चित्र बनाएँगे। भले ही उन्हें कोई न सिखाये। वे सतत अभ्यास करेंगे। धीरज नहीं खोएँगे। एक बार गलती करेंगे, दो बार गलती करेंगे। कभी न कभी तो वे सफल होंगे ही। वे अपनी ही गलतियों से सीखेंगे। आगे बढ़ेंगे।

यदि कोई पक्का निश्चय कर ले। उस निश्चय को पूरा करने में ईमानदारी से जुट जाए तो सफलता मिलती ही है!

कहा भी गया है—

व्हेयर देयर इज़ ए विल

देयर इज़ ए वे।

—जहाँ चाह वहाँ राह!

अब तो रामस्वामी नायकर की उपेक्षा रवि वर्मा के संकल्प को और दृढ़ करती। महाराजा आयिल्यम तिरुनाल का प्रोत्साहन उन्हें निराश नहीं होने देता।

वही बैलगाड़ी की यात्रा। वही घंटियों की टुनटुन। रवि वर्मा का मन कुछ खिन्न भी था। कुछ प्रसन्न भी। एक ओर पत्नी से विदा लेने का दुख। दूसरी

एक मराठी महिला

(साभार : राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली)

और किलिमानूर लौटने की प्रसन्नता।

किलिमानूर जहां मां, पिता, बहन, भाई, मामा और उनके दोस्त थे।

राह में कभी उन्हें किलिमानूर का ख्याल आता। कभी मावलेकिरा का। मावलेकिरा में उनकी पत्नी थी। वहां भी उन्होंने दो वर्ष बिताये थे। पर कभी-कभी आदमी विवश हो जाता है। कई बार परिस्थितियां ऐसी बन जाती हैं कि आदमी कुछ कर नहीं पाता। विवश हो जाता है।

इस समय रवि वर्मा भी इसी तरह विवश थे।

विवश होना बुरी बात नहीं है। जिन परिस्थितियों पर अपना बस नहीं, उनके सामने विवश होना ही पड़ता है। पर जो साहसी होते हैं, जिनके मन में कोई लक्ष्य होता है, वे विवश होकर भी निराश नहीं होते। वरन, वे सोचते हैं कि उन विवशताओं से कैसे मुक्ति पायी जाए। जिन परिस्थितियों ने विवश बनाया है, उन पर किस तरह विजय प्राप्त की जाए। निराशा से कभी किसी को कुछ नहीं मिला है। वह तो एक अंधेरी सुरंग की तरह होती है। पर विवेक से इस अंधेरी सुरंग में भी प्रकाश किया जा सकता है। साहस से, बुद्धिमानी से निराश को भी आशा में बदला जा सकता है। जो लोग अपना लक्ष्य नहीं भूलते, जो उसे पाने के लिए सतत प्रयत्नशील होते हैं, निराशा उनका मार्ग रोक नहीं सकती।

रवि वर्मा के सामने भी एक लक्ष्य था। चित्रकला में निपुणता प्राप्त करने का। किलिमानूर पहुंचकर उनके मन में नया उत्साह जाग गया और यह उत्साह जाग पाया राजा राज वर्मा की रंगशाला को देखकर। इसी रंगशाला में तो उन्होंने मामा से रंग तैयार करना सीखा था। इसी रंगशाला में तो उनकी कला निखरी थी।

बस, रवि वर्मा ने निश्चय कर लिया। जो बीत गया, सो बीत गया। अब वे मावलेकिरा को भूल जाएंगे। कितना कुछ करना है। कितने सारे विषय हैं, जिन पर चित्र बनाने हैं।

रवि वर्मा को लगा, वे जैसे फिर से किशोर बन गये हैं। वही उत्साह, चित्र बनाने की मन में वही ललक।

रंगशाला में चित्रकारी की सारी सामग्री रखी हुई थी। बस, उन्हें फलक पर आकृतियां बनानी थीं। उनमें रंग भरने थे। रंग जो चित्त को प्रसन्न करते हैं। चित्र जो बनने पर संतोष देते हैं।

रवि वर्मा पूरे उत्साह से चित्र बनाने में जुट गये।

*** ***

रवि वर्मा की देवी-देवताओं पर बड़ी आस्था थी। बचपन से ही उन्हें पूजा-पाठ के संस्कार मिले थे। इसी तरह बचपन से ही उन्हें प्रकृति से प्यार था। पूर्व में प्रातः निकलता सूर्य, शाम को पश्चिम में डूबता सूर्य। चहचहाते पक्षी। जुगाली करते घरेलू पशु। वनों के हिंसक जीव। इन सभी ने रवि वर्मा को लुभाया था। अब वे कल्पना से इनके ही चित्र बनाते।

माता-पिता, बहन, मामा उनके बनाये चित्रों को देखते। उन्हें आश्चर्य होता, किस भांति बना लेते हैं वे इतने सुंदर चित्र। उनकी देखादेखी मंगला को भी चित्रकला का शौक उत्पन्न हो गया।

रवि वर्मा के दो भाई और थे। राज वर्मा और गोदा वर्मा। उनमें से राज वर्मा को भी चित्रकला ने आकर्षित किया। गोदा वर्मा का झुकाव संगीत के प्रति था।

परिवार में रहकर रवि वर्मा सारी मानसिक व्यथा भूल गये। अब वे अपने में एक नयी स्फूर्ति का अनुभव कर रहे थे।

इसी तरह दिन बीतने लगे।

अचानक एक दिन रवि वर्मा को महाराजा आयिल्यम तिरुनाल का संदेश मिला। उन्होंने उन्हें तिरुवनन्तपुरम् बुलवाया था।

हुआ यह था कि महाराजा तिरुनाल को रवि वर्मा के वैवाहिक जीवन की कहानी मालूम पड़ गयी थी। उन्हें सूचना मिल गयी थी कि पति-पत्नी में मतभेद हो गया है। रवि वर्मा ने मावलेकिरा छोड़ दिया है। अब वे किलिमानूर में अपने माता-पिता और मामा के पास रहते हैं। महाराजा तिरुनाल एक बात जानते थे। किलिमानूर में रहने से रवि वर्मा का विकास नहीं हो पाएगा। उचित मार्गदर्शन न मिलने से भटकाव भी आ सकता है। इसीलिए उन्होंने उन्हें तिरुवनन्तपुरम् बुलवाया था।

महाराजा तिरुनाल का संदेशा पाकर रवि वर्मा तिरुवनन्तपुरम् पहुंचे। वही राजमहल। वही लोग। वही अपनी हवेली।

रवि वर्मा महाराजा तिरुनाल से मिलने गये। प्रणाम किया। आज्ञा पूछी।

महाराजा तिरुनाल ने देखा, रवि वर्मा अब पूरी तरह वयस्क हो गये हैं। उनका व्यक्तित्व और भी अधिक आकर्षक हो गया है। उन्होंने रवि वर्मा से उनके स्वास्थ्य के बारे में पूछा। माता-पिता और मामा के बारे में पूछा। फिर कहा, "तुमने मावलेकिरा छोड़ दिया है। यह मुझे ज्ञात हुआ। हो सकता है, तुम्हारा मन वहां न लगा हो। पर तुम्हें तिरुवनन्तपुरम् ही वापस आ जाना था।"

रवि वर्मा मौन रहे।

'महाराजा तिरुनाल ने आगे कहा, "कोई बात नहीं। अब तुम यहीं रहोगे। यहीं रहकर चित्रकला की साधना करोगे।"

फिर महाराजा ने उन्हें समझाया, "रवि, किलिमानूर बहुत अच्छी जगह है। तुम्हारा बचपन वहां बीता है। उससे लगाव होना स्वाभाविक है। पर अब किलिमानूर में रहकर तुम अधिक नहीं सीख पाओगे। इसीलिए चाहता हूं कि तुम तिरुवनन्तपुरम् में रहो। यहां राजकीय रंगशाला है। पुस्तकालय है। उसमें चित्रकला के संबंध में आधुनिक पुस्तकें हैं। फिर यूरोप के चित्रकारों के बनाये चित्रों की मुद्रित अनुकृतियां भी यहां हैं। विदेशी चित्रकार भी यहां आते रहते हैं। यहां रहकर तुम काफी सीख सकोगे। हां, जब मन ऊब जाए तब किलिमानूर चले जाना कुछ दिनों के लिए। मावलेकिरा भी चले जाना कभी-कभी। आखिर, वहां तुम्हारी पत्नी है।"

महाराजा तिरुनाल की बातों ने रवि वर्मा को सांत्वना दी। एक नयी दृष्टि भी दी। महाराजा ठीक कहते हैं। तिरुवनन्तपुरम् में रहकर चित्रकला की साधना अच्छी तरह की जा सकती है। यहां एक नहीं, अनेक अवसर हैं। नये-नये लोगों से संपर्क की भी सुविधा है।

रवि वर्मा ने किलिमानूर खबर भेज दी। अब वे तिरुवनन्तपुरम् में ही रहेंगे। मावलेकिरा में पत्नी को भी सूचना भिजवा दी।

अब वे अपनी हवेली में रहकर उसके एक कक्ष में चित्र बनाने लगे। कभी वे भ्रमण को निकल जाते। बाजार में घूमा करते। साधारण स्त्री-पुरुषों के जीवन को देखते। उनकी मुखाकृतियों का अध्ययन करते। कभी वे वहीं रेखाचित्र बनाने लगते। कभी हवेली लौटकर रेखाचित्र बनाते।

वे पुस्तकालय में भी जाते। चित्रकला विषयक पुस्तकें पढ़ते। पुराणों का अध्ययन करते। रामायण, महाभारत, भागवत के प्रसंगों पर विचार-मनन किया करते।

वे पूरी तरह कला साधना में डूब गये। अब मन में निराशा का कहीं नाम-निशान तक न था। हर नया दिन एक नया उत्साह लेकर आता।

ऐसा ही होता है। जब तक हम कुछ नहीं करते, केवल सोचा करते हैं, तब तक भटकते रहते हैं। तब मन स्थिर नहीं रहता। बहुधा निराशा ही मन को घेर लेती है। निराशा हमारे आत्मविश्वास में घुन की तरह लग जाती है। और जब आत्मविश्वास ढह जाता है तो मनुष्य अपने को असहाय पाने लगता है। इसीलिए कर्म पर जोर दिया गया। जो व्यक्ति कर्म करता रहता है, अपने कार्य में जुटा रहता है, उसके पास निराशा तो फटकती भी नहीं।

तिरुवनन्तपुरम् में रवि वर्मा के जीवन से निराशा पूरी तरह दूर हो चुकी थी। अब उनमें नयी आशा थी। नया उत्साह था। नया आत्मविश्वास था।

एक दिन की बात है।

महाराजा आयिल्यम तिरुनाल ने रवि वर्मा को महल बुलवा भेजा।

रवि वर्मा तुरंत पहुंचे।

उन्होंने देखा, महल में महाराजा के पास एक गोरे सज्जन खड़े हैं। रवि वर्मा ने महाराजा को नमस्कार किया। फिर मौन होकर सोचने लगे आखिर, महाराजा साहब ने क्यों बुलवाया है।

उन्हें पता नहीं था कि वह एक विदेशी चित्रकार हैं।

उस चित्रकार का नाम था—थ्योडर जेनसेन। वह हॉलैंड का निवासी था और महाराजा के पास राज-परिवार के सदस्यों के चित्र बनाने के लिए आया था।

उन दिनों यूरोप के अनेक चित्रकार भारत आते रहते थे। यहां ये भारतीय प्राकृतिक दृश्यों का चित्रांकन करते। ये चित्र उनके देश में पसंद किये जाते थे। वे बिकते भी थे। साथ ही ये चित्रकार भारतीय राजा-महाराजाओं के चित्र भी बनाते थे। उनके परिवार के सदस्यों के भी चित्र बनाते थे। ये चित्र उनकी हू-ब-हू तसवीर होते। इसीलिए वे पसंद भी किये जाते थे। इन चित्रकारों को राजा-महाराजाओं से अच्छा पारिश्रमिक भी मिलता था। पुरस्कार और भेंटें भी मिलती थीं। थ्योडर जेनसेन भी ऐसा ही एक चित्रकार था। वह महाराजा आयिल्यम तिरुनाल और उनके राज-परिवार के सदस्यों के चित्र बनाने आया था।

महाराजा चाहते थे कि रवि वर्मा भी थ्योडर जेनसेन से कुछ सीख लें। इसीलिए उन्होंने रवि वर्मा को बुलवाया था। रवि वर्मा के आने पर महाराजा तिरुनाल ने चित्रकार जेनसेन से कहा, "मिस्टर जेनसेन! यह किशोर भी चित्रकला जानता है। अच्छा चित्रकार बनना चाहता है। हमारा संबंधी भी है। मैं चाहता हूं, आप इसे चित्रकला की नयी तकनीक सिखाएं।

फिर उन्होंने उसे रवि वर्मा के बनाये कुछ चित्र दिखाये। ये चित्र देशी रंगों से बने हुए थे। जेनसेन ने उन्हें देखा और उपेक्षा से एक ओर कर दिया। फिर उसने विनम्रता से कहा, "महाराज, क्षमा करें। मैं तो मात्र चित्रकार हूं। चित्रकला की शिक्षा देना शायद, मेरे बस में नहीं। और ऐसे नौसिखिये को तो मैं कुछ सिखा ही नहीं सकता।"

चित्रकार जेनसेन का उत्तर सुनकर महाराजा मुस्करा उठे। बोले, "कोई बात नहीं। पर एक काम तो आप कर ही सकते हैं।"

"कहिए, महाराज।" जेनसेन ने कहा।

"बस, एक कार्य अवश्य कीजिए। जब भी आप राजघराने के किसी व्यक्ति का चित्र बनाएं, उस नवयुवक को अपने पास बैठकर देखने का अवसर दीजिए।"

चित्रकार जेनसेन यह भी नहीं चाहता था। उसने बहाना बनाते हुए कहा, "महाराज, क्षमा करें। चित्र बनाते वक्त एकाग्रता की जरूरत होती है। उस समय मेरे पास कोई होता है तो ध्यान भंग हो जाता है। अतः मैं आपका यह निर्देश भी नहीं मान सकूंगा। क्षमा करें।"

महाराजा तिरुनाल गंभीर हो उठे। उन्हें जेनसेन की बातें अप्रिय लगीं। क्षण भर में उन्होंने एक निर्णय कर लिया। वे बोले, "ठीक है मिस्टर जेनसेन, यदि आपको मेरा सुझाव मंजूर नहीं, तो हमें भी आपके बनाये चित्रों की आवश्यकता नहीं। दीवान जी से मिल लें। वे आपकी वापसी की व्यवस्था करवा देंगे।"

फिर क्षण भर रुककर उन्होंने कहा, "मिस्टर जेनसेन, मेरी समझ में एक बात नहीं आती। भला, एक नवयुवक अपनी उपस्थिति से आपका ध्यान कैसे भंग कर सकता है। आपका तर्क हमारी समझ में तो आता नहीं।"

चित्रकार जेनसेन को यह आशंका नहीं थी कि महाराजा उससे काम ही नहीं कराएंगे। राजा-महाराजाओं के चित्र बनाकर उसे काफी आय हो जाती थी। पुरस्कार व भेंट अलग मिलती थी। चित्रकार जेनसेन ने सोचा, यदि महाराजा अप्रसन्न हो गये तो बड़ी कठिनाई होगी। यह खबर और राजा-महाराजाओं को भी मालूम पड़ेगी। तब तो वे भी चित्र नहीं बनवाएंगे। बड़ी आर्थिक क्षति होगी।

अतः चित्रकार जेनसेन ने फैसला कर लिया। वह इस नवयुवक को अपने पास बैठने की अनुमति दे देगा, पर उसे कुछ सिखाएगा नहीं। उसने विनम्रता से कहा, "महाराज, क्षमा करें। आपको अप्रसन्न करने का मेरा कोई इरादा नहीं था। मैंने तो अपनी बात भर कही थी। आपका आदेश है, तो इसे भी अपने पास बैठा लिया करूंगा।"

महाराजा ने मुस्करा कर कहा, "धन्यवाद, मिस्टर जेनसेन।"

फिर उन्होंने रवि वर्मा से कहा, "रवि, जेनसेन एक कुशल चित्रकार हैं। उनके पास केवल बैठने से ही तुम बहुत कुछ सीख सकते हो। अब जाओ, इस नये अवसर का पूरा-पूरा लाभ उंठाओ।"

रवि वर्मा ने महाराजा तिरुनाल और चित्रकार जेनसेन को नमस्कार किया और अपनी हवेली में लौट आये।

xxx xxx

अब रवि वर्मा नियमित रूप से जेनसेन के पास जाने लगे। जेनसेन का कार्य था, राज-परिवार के सदस्यों का चित्र बनाना। जेनसेन मनोयोगपूर्वक अपना कार्य करता था। रवि वर्मा की उपस्थिति से पहले तो वह थोड़ा विचलित हुआ। फिर अभ्यस्त हो गया।

रवि वर्मा भी तन्मय होकर उसे सारा कार्य करते देखते। लेकिन उनका सारा ध्यान एक विशेष बात की ओर होता। वे एकाग्र चित होकर देखते, जेनसेन रंग किस तरह तैयार करते हैं। किन-किन रंगों को मिलाकर नये रंग की सृष्टि करते हैं। धीरे-धीरे वे रंग मिलाने की कला समझने लगे।

तभी एक घटना घट गयी।

महाराजा आयिल्यम तिरुनाल जेनसेन के पास आये। उस समय वह राज-परिवार के एक सदस्य का चित्र बना रहा था।

रवि वर्मा भी पास ही खड़े थे।

महाराजा ने देखा, रवि वर्मा का ध्यान चित्र फलक की ओर नहीं है। वे जेनसेन का कूंची चलाना भी नहीं देख रहे हैं। रवि का सारा ध्यान रंगों की ओर है। जेनसेन किन-किन रंगों को किस तरह प्रयोग में लाते हैं, यही वह देख रहा है।

महाराजा तिरुनाल ने जेनसेन से कहा, "मिस्टर जेनसेन, आपका यह शिष्य कुछ सीख रहा है।"

जेनसेन ने कोई उत्तर नहीं दिया।

महाराजा ने आगे कहा, "मिस्टर जेनसेन, यह लड़का तो आपका चित्रांकन देख ही नहीं रहा है।"

जेनसेन चौंका। उसने आश्चर्य से पूछा, "फिर?"

"इसका ध्यान तो आपके रंगों की ओर है। यह यही देख रहा है कि आप किस तरह रंग तैयार करते हैं।"

जेनसेन गंभीर हो उठा। उसने रुखे स्वरों में कहा, "महाराज, क्षमा करें। कल से यह रंगशाला में नहीं आ सकेगा।"

महाराजा के चेहरे पर मुस्कान तैर गयी। उन्होंने कहा, "ठीक है, नहीं आएगा।"

वे कक्ष के बाहर चले गये।

रवि वर्मा भी उनके साथ कक्ष के बाहर आ गये।

रवि वर्मा को इस घटना पर आश्चर्य भी था। कुछ क्षोभ भी था। वे सोचते, आखिर, चित्रकार अपनी कला को क्यों गोपनीय बनाये रखना चाहते हैं? कला का, ज्ञान का जितना प्रसार हो, उतना ही अच्छा है।

पर वे नहीं जानते थे कि आखिर, चित्रकार क्यों अपनी कला अपने तक सीमित रखते हैं। कारण आर्थिक था। चित्रकार नहीं चाहते थे कि कोई और चित्रकला में प्रवीणता प्राप्त करे। कोई उनका प्रतिद्वंद्वी बन सके। वे चित्रकला पर अपना एकाधिकार चाहते थे।

फिर भी चित्रकार जेनसेन के पास बैठकर रवि वर्मा ने काफी कुछ सीख लिया था।

रवि वर्मा की चित्रकला दिनों-दिन निखर रही थी। थ्योडर जेनसेन की पोर्ट्रेट बनाने की शैली से उन्होंने बहुत कुछ सीखा था। अब वे भी इसी तरह पोर्ट्रेट अर्थात् व्यक्ति-चित्र बनाने की कोशिश करने लगे थे।

उनके पास मेहनत थी, लगन थी, अभाव था तो केवल आधुनिक तरीकों से तैयार रंगों का। परंपरागत तरीके से तैयार किये जाने वाले रंगों का चलन कम हो रहा था। रवि वर्मा अक्सर सोचते, काश, उनके पास आधुनिक तरीकों से तैयार किये गये रंग होते!

एक दिन उनकी यह इच्छा भी पूरी हो गयी।रवि वर्मा की पत्नी पुरुतार्थी रानी लक्ष्मीबाई की छोटी बहन थीं। रानी लक्ष्मीबाई के पति थे केरल वर्मा। वे उच्च कोटि के साहित्यकार थे। ललित कलाओं से भी उन्हें प्यार था। रवि वर्मा की लगन से वे बेहद प्रभावित थे। वे रवि वर्मा की कठिनाइयों को भी समझते थे। जानते थे कि रवि वर्मा आधुनिक रंगों से चित्र बना सकते हैं। पर उनके पास इन रंगों का अभाव है।

अतः एक दिन उन्होंनें मद्रास से रंगों की पेटी मंगवायी। उन दिनों दक्षिण में मद्रास में ही, ये रंग बाजार में मिलते थे। जब रंग तिरुवनन्तपुरम् पहुंच गये तो केरल वर्मा ने उन्हें रवि वर्मा को भेंट कर दिया। कहा, "रवि, तुम्हें इन्हीं रंगों की जरूरत थी! ये रंग तुम्हें भेंट हैं। अब इच्छानुसार चित्र बनाओ। ये रंग खत्म हो जायेंगे तो फिर मंगवा लेंगे।"

हंस की प्रतीक्षा करती दमयंती

(साभार : श्री चित्रकला दीर्घा, तिरुवनन्तपुरम्)

रंग पाकर रवि वर्मा की प्रसन्नता का ठिकाना नहीं रहा। उन्हें जैसे मनचाही वस्तु मिल गयी। उन्होंने केरल वर्मा के प्रति आभार व्यक्त किया और रंग ले लिये।

पर एक समस्या थी। किस का चित्र बनाया जाए! रवि वर्मा बहुत देर सोचते रहे। सहसा उन्हें पुरुतार्थी की बड़ी बहन रानी लक्ष्मीबाई का ध्यान आया। वे रवि वर्मा का बड़ा ध्यान रखती थीं। बिलकुल पुत्र की तरह स्नेह करती थीं। उनके कारण रवि वर्मा को घर की याद अधिक नहीं सताती थी। रवि वर्मा ने तय किया कि वे अपने पहले पोट्रेट के लिए रानी लक्ष्मीबाई से अनुरोध करेंगे। पोट्रेट के लिए व्यक्ति को स्थिर होकर बैठना पड़ता है। काफी देर तक। एक ही मुद्रा में। अर्थात्, एक तरीके से।

रवि वर्मा ने रानी लक्ष्मीबाई से अपने मन की बात कही। वे हंस पड़ीं, 'अरे, मेरा चित्र बनाओगे! नहीं, किसी और का चित्र बनाओ।"

रवि वर्मा ने हठ पकड़ ली। "बनाऊंगा तो केवल आपका चित्र, नहीं तो रंग धरे रहेंगे।"

आखिर, रानी लक्ष्मीबाई ने रवि वर्मा की बात मान ली। उन्होंने कहा, "ठीक है। कामकाज खत्म होने के बाद मैं बैठ जाया करूंगी तुम्हारे सामने। पर एक शर्त है। इस बात का किसी को पता नहीं चलना चाहिए।"

दूसरे दिन से ही रवि वर्मा ने रानी लक्ष्मीबाई का चित्र बनाना शुरू कर दिया। वे मनोयोग से काम मे जुट गये। सात-आठ दिन में चित्र तैयार हो गया। रानी लक्ष्मीबाई ने अपना चित्र देखा। वे बहुत खुश हुईं। इतना सुंदर चित्र तो उस विदेशी चित्रकार ने भी नहीं बनाया था। उन्होने अन्य लोगों को वह चित्र दिखाया। सब ने चित्र की खूब प्रशंसा की। रवि वर्मा को और चित्र बनाने के लिए प्रोत्साहित किया। किसी ने कहा, "ये चित्र निर्जीव नहीं हैं। इसमें प्राण हैं। चेहरे के भाव कितने सुंदर हैं। विदेशी चित्रकारो के चित्रों में भाव नहीं होते। उनके बनाये चित्र केवल नकल भर होते हैं।"

सबने रवि वर्मा के प्रयास की प्रशंसा की। इससे उनका हौसला बढ़ा। उनमें और चित्र बनाने का उत्साह जागा।

xxx xxx

अब उन्होंने राज-परिवार के अन्य सदस्यों के चित्र भी बनाने शुरू किये। यही नहीं, अब उनका ध्यान सामान्य लोगों की ओर भी गया। राह चलते लोग, बाजार में सामान बेचते दुकानदार। सामान खरीदते खरीददार। मंदिर में पूजा के लिए जाते हुए स्त्री-पुरुष। रवि वर्मा इनके रेखाचित्र बनाते। फिर उनमें से कुछ के आधार पर रंगीन चित्र बनाते।

इसी बीच उन्हें कुछ विदेशी चित्रकारों के चित्रों के एलबम भी देखने को मिले। वे ऐसे तीन विदेशी चित्रकारों से बहुत प्रभावित हुए। उनके नाम थे— लुई बोलंगार, गुस्ताव बोलंगार और एडाल्फ बोरक्यू। इनके बनाये चित्रों में रंग-संयोजन बहुत उत्तम था। रवि वर्मा भी इसी तरह के रंग-संयोजन का प्रयत्न करने लगे। शुरू में तो उन्हें सफलता नहीं मिली। पर उन्होंने हिम्मत नहीं हारी। परिश्रम के साथ प्रयत्न में जुटे रहे। उन्होंने अपनी गलतियों को पहचाना। उन्हें सुधारा। फिर प्रयत्न किया। इस तरह अपनी गलतियों से ही उन्होंने सीखा। कहा जाता है कि पहली बार रवि वर्मा ने ही 'प्रिंसिपल ऑफ परस्पेक्टिव' की शुरुआत की। 'प्रिंसिपल ऑफ परस्पेक्टिव' चित्रकला का एक सिद्धांत है। इस सिद्धांत के अनुसार, चित्रकार स्वयं देखे गये दृश्य के अनुसार चित्रांकन करता है। 'हम कोई दृश्य देखते हैं। जो चीजें पास होती हैं, वे बड़ी नजर आती हैं। दूर की चीजें छोटी दिखायी देती हैं। चित्रकार अपने चित्र को इस तरह बनाता है कि चित्र में वह दृश्य ठीक वैसा ही दिखायी देता है, जैसा कि वह है। रवि वर्मा को इस तरह के चित्रांकन में प्रवीणता प्राप्त थी।

रवि वर्मा को धार्मिक संस्कार अपने माता-पिता से मिले थे। बचपन में मां उमा की गोद में बैठकर उन्होंने भक्ति पद सुने थे। शंकराचार्य की

'सौंदर्य-लहरी' सुनी थी। वे ध्यान के श्लोकों का, मंत्रों का पाठ भी करते थे। जब वे वंदना करते तो उन्हें लगता, देवी-देवता उनके पास आ विराजे हैं। वे ध्यान में इन देवी-देवताओं के रूप-स्वरूप की कल्पना करते।

रवि वर्मा स्वभाव से भी सरल थे। वे दुर्व्यसनों से सदा दूर रहते थे। यों, उन दिनों तथाकथित छुआछूत की भावना बहुत अधिक थी। पर रवि वर्मा इन सब बातों को नहीं मानते थे। उनका हृदय उदार था। वे सब की सहायता के लिए सदा तत्पर रहते थे।

अच्छा कलाकार कौन? श्री महावज्र भैरव-तत्र नामक एक प्राचीन ग्रंथ। उसमें अच्छे कलाकार के गुण बताये गये हैं। इस ग्रंथ के अनुसार कलाकार को अवश्य ही एक अच्छा आदमी होना चाहिए। वह आलसी न हो। कभी क्रोध न करे। विद्वान हो। अपने पर नियंत्रण रखना जानता हो। भक्त हो। उदार हो। उसे किसी प्रकार का कोई लोभ भी न हो।

रवि वर्मा कलाकार की इस कसौटी पर बिलकुल खरे उतरते थे। इसी कारण वे लोकप्रिय भी थे।

रवि वर्मा अब जीवन के चौराहे पर खड़े थे। वे वयस्क हो चुके थे। उनका विवाह भी हो चुका था। अब प्रश्न था कि वे आजीविका के लिए क्या करें? जीवन में कुछ न कुछ काम तो अवश्य ही करना होता है।

रवि वर्मा चित्रकार थे। पर क्या वे चित्रकारी को अपना व्यवसाय बना सकते थे? जिस परिवार के वे थे, उसमें पहले किसी ने ऐसा नहीं किया था। चित्रकारी का शौक एक अलग बात है। उसे आजीविका का साधन बनाना दूसरी बात। और वह भी राजघराने से संबंधित व्यक्ति के लिए। उन दिनों चित्रकारी को राजघराने के योग्य काम नहीं समझा जाता था। फिर एक प्रश्न और था। रवि वर्मा सोचते, क्या एक व्यावसायिक चित्रकार के रूप में वे सफल हो सकेंगे? क्या लोग उन्हें चित्रकार के रूप में मान्यता देंगे? ऐसे ही अनेक प्रश्न थे।

एक दिन रवि वर्मा ने महाराजा तिरुनाल को अपनी समस्या बतायी। कहा कि कोई निर्णय नहीं कर पा रहा हूं। क्या करूं? क्या चित्रकारी को पूरी तरह अपना लूं!

महाराजा तिरुनाल ने उनकी बातें सहृदयता से सुनीं। महाराजा स्वयं कला के पारखी थे। रवि वर्मा की भावना को अच्छी तरह समझते थे। उन्होंने उन्हें समझाया कि चित्रकारी को अपनाने में कोई दोष नहीं है। यह कोई असम्मानजनक कार्य नहीं है।

महाराजा तिरुनाल ने कहा, "रवि, कला तो महान होती है। कोई भी कला हो। संगीत कला हो या चित्रकला। कला महान है। वह हम में संस्कार पैदा करती है। हमें आनंद देती है। उसे अपनाने में किसी की मानहानि कैसे हो सकती है! यदि तुम चित्रकार बनना चाहते हो, तो झिझकते क्यों हो? पूरी निष्ठा के साथ उसे अपना लो। तुम अवश्य सफल होगे। एक श्रेष्ठ चित्रकार के रूप में जाने जाओगे।"

महाराजा तिरुनाल की बातें सुनकर रवि वर्मा का चित्त स्थिर हुआ। उन्होंने सोचा, महाराजा ठीक कहते हैं। कला तो महान होती है। अमर होती है। लोग आते हैं, चले जाते है, पर उनकी बनायी कृतियां अमर होती हैं। कई पीढ़ियों तक लोगों को प्रभावित करती हैं। उन्हें आनंद देती हैं, उनसे आत्मिक संतोष मिलता है।

रवि वर्मा ने निश्चय किया, वे चित्रकार ही बनेंगे। चित्रकला को पूरी तरह अपना लेंगे। उनके सामने विदेशी चित्रकारों के उदाहरण थे। रवि वर्मा ने सोचा, अपनी कला के कारण ही तो वे सात समुद्र पार भी जाने जाते हैं। उनका मान है, सम्मान है।

रवि वर्मा ने मन में पक्का संकल्प कर लिया। वे चित्रकार ही बनेंगे। अपना पूरा समय चित्रकला में लगायेंगे। ईश्वर ने चाहा तो वे अवश्य सफल होंगे।

ईश्वर !

रवि वर्मा को ईश्वर पर अगाध विश्वास था। ईश्वर की पूजा-प्रार्थना से उन्हें नयी शक्ति मिलती थी। मन शांति भी पाता था।

एक दिन रवि वर्मा ने सोचा, कार्य शुरु करने के पहले तीर्थ-यात्रा करनी चाहिए। पर प्रश्न उठा कि कहां जाएँ ?

आखिर, उन्होंने मुकुम्बिका देवी के दर्शन करने का संकल्प किया।

मुकुम्बिका देवी विद्या की देवी मानी जाती हैं। उनका मंदिर दक्षिणी कनारा जिले में स्थित था। यह स्थान तिरुवनन्तपुरम् से काफी दूर था। पर यह दूरी रवि वर्मा को अपने संकल्प से नहीं डिगा पायी। उन्होंने महाराजा को सूचित किया कि वे तीर्थ-यात्रा पर जाना चाहते हैं। किलिमानूर में घरवालों को भी संदेश भिजवा दिया।

फिर वे एक दिन दो संबंधियों के साथ तीर्थ-यात्रा पर निकल पड़े।

उन दिनों आज-जैसी न सड़कें थी और न तेज गति से चलने वाले वाहन।

यह यात्रा उन्हें कहीं पैदल और कही नाव से ही तय करनी थी। पर मन में मुकुम्बिका देवी के प्रति श्रद्धा थी। आस्था थी। विश्वास था। और आस्था और विश्वास से असंभव कार्य भी संभव हो जाते हैं।

सो, रवि वर्मा चल पड़े। साथ में दोनों संबंधी भी थे। घने वनों के बीच से गुजरते, नदी में नावों के सहारे सफर करते, वे आगे बढ़ने लगे।

आखिर, एक दिन वह यात्रा भी पूरी हुई।

रवि वर्मा अपने दोनों संबंधियों के साथ देवी के मंदिर के द्वार पर जा पहुंचे।

मंदिर देखते ही प्रसन्नता से उनका गला भर आया। मन में प्रार्थना के स्वर फूटे—

'मां, तुम्हारी शरण में आया हूं। अपना संकल्प पूरा कर सकूँ, ऐसी शक्ति दो। सही मार्ग पर चल सकूं, ऐसा विवेक दो।'

रवि वर्मा इकतालीस दिन तक वहीं रहे। वे प्रतिदिन प्रातः उठते। स्नान करते। फिर देवी के मंदिर में जाते। वहां वे देवी की स्तुति करते। भजन गाते। विधिपूर्वक देवी की पूजा-आराधना में समय बिताते।

मुकुम्बिका देवी के मंदिर में रवि वर्मा को आत्मिक शांति मिलती। वे जब नेत्र मूंद कर देवी का ध्यान करते तो उनका आत्मविश्वास दुगुना हो जाता। रवि वर्मा को लगता, उन्होंने अपने लिए सही मार्ग चुना है। देवी की कृपा और अपने परिश्रम से वे अवश्य सफल होंगे।

इकतालीस दिनों तक देवी की पूजा-अर्चना के बाद रवि वर्मा घर के लिए वापस चले। फिर उसी तरह पैदल-यात्रा। गावों में ठहरते, प्रकृति की सुषमा का आनंद उठाते हुए कालीकट पहुंचे।

वहां उनकी भेंट कालीकट न्यायालय के एक उपन्यायाधीश से हुई। उनका नाम था। किजा के. पालट कृष्ण मेनन। किजा के. पालट कृष्ण मेनन ने रवि वर्मा का नाम सुन रखा था। उन्होंने उनसे कहा, "अब आप हमारे परिवार के लोगों के चित्र बनाइए। जो भी पारिश्रमिक चाहेंगे, आपको भेंट करने की कोशिश करूंगा।"

यह सन 1870 की बात है।

पहली बार पारिश्रमिक लेकर रवि वर्मा ने इसी परिवार का चित्र बनाया था।

पालट कृष्ण मेनन अपना, अपने परिवार का चित्र देखकर बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने रवि वर्मा का यथोचित सम्मान किया। पारिश्रमिक दिया।

xxx xxx

कालीकट से तिरुवनन्तपुरम्।

फिर वही जीवन! पर अब एक अंतर आ गया था। अब उनके जीवन को एक दिशा मिल गयी थी।

जीवन को सही दिशा मिलना बड़ी बात है। सही दिशा पा जाने पर मन भटकता नहीं। जीवन उद्देश्यपूर्ण हो जाता है। निरुद्देश्य नहीं रहता। आदमी के सामने कोई उद्देश्य न हो, तो वह भटकता रहता है।

तिरुवनन्तपुरम् में रवि वर्मा रंगशाला में चित्र बनाते। समारोहों में भाग लेते। एक कुशल चित्रकार के रूप में सभी उनका सम्मान करते।

एक दिन की घटना है।

राजमहल में एक समारोह का आयोजन किया गया था। ऐसे समारोहों में लोग मद्यपान भी करते थे। यह बड़े लोगों के बीच एक फैशन-सा था। वह आधुनिक होने का प्रमाण समझा जाता था।

इसी समारोह में वह घटना घटी थी। इससे रवि वर्मा के चरित्र पर प्रकाश पड़ता है।

समारोह में एक युवराज ने रवि वर्मा को मद्यपान के लिए निमंत्रित किया।

रवि वर्मा ने विनम्रता से उत्तर दिया, "युवराज, मैं मद्यपान नहीं करता।'

युवराज तो युवराज!

उसे आदत थी, हमेशा 'हां' सुनने की।

चाटुकार लोग सदैव उसकी 'हां' में 'हां' मिलाते थे।

उन्होंने भी रवि वर्मा से आग्रह किया, "युवराज कह रहे हैं, तो थोड़ी-सी पी लो।" रवि वर्मा ने फिर 'न' कर दी।

अब तो युवराज ने हठ पकड़ ली। इस बात को प्रतिष्ठा का प्रश्न बना लिया। रवि वर्मा से कहा, "आज तो आपको पीनी ही पड़ेगी।" उसके स्वर में कुछ अधिकार का भाव भी था।

इससे रवि वर्मा के आत्मसम्मान को ठेस लगी। वे बड़े स्वाभिमानी थे। इच्छा के विपरीत दबाव में आकर कार्य करने की उसकी आदत नहीं थी।

वे गंभीर स्वर में बोले, "युवराज, मेरा जीवन मद्यपान में नष्ट करने के लिए नहीं है।"

युवराज चिढ़ गया। उसे क्रोध आ गया।

बात बढ़ती देखकर महाराजा आयिल्यम तिरुनाल ने हस्तक्षेप किया। बोले, "युवराज, कोई मद्यपान नहीं करना चाहता तो जबरदस्ती क्यों? रवि वर्मा को बाध्य मत करो।"

युवराज मौन हो गया। पर उसके मन में यह बात फांस बनकर चुभ गयी। वह अपने चाटुकार लोगों के साथ वहां से चला गया।

महाराजा आयिल्यम तिरुनाल ने रवि वर्मा की ओर मुसकरा कर देखा मानो कह रहे हों, 'तुमने ठीक किया।'

इस घटना के बाद महाराजा आयिल्यम तिरुनाल रवि वर्मा को और अधिक चाहने लगे।

उन्हें अपार संतोष भी हुआ। महाराजा देख रहे थे कि नयी पीढ़ी विदेशी शासकों की शान-शौकत तो अपना रही है, पर उनके गुण उसने नहीं लिये हैं।

रवि वर्मा ने विदेशी शासकों की शान-शौकत से अपने दो दूर रखा। उनकी कभी नकल नहीं की। बुरी आदतें नहीं सीखीं। एक ओर नयी पीढ़ी के युवक उसे ही अपना रहे थे। दूसरी ओर रवि वर्मा अंग्रेजी भाषा पर अधिकार करने में लगे हुए थे। उन्हें त्रावणकोर राज्य के दीवान से भी भरपूर सहयोग मिल रहा था। उनका नाम था — टी. माधवराव।

टी. माधवराव विद्वान थे। प्रतिभा के पारखी थे। उन्होंने रवि वर्मा की प्रतिभा को पहचान लिया था। वे उन्हें हर संभव सहायता देना चाहते थे।

अब तक रवि वर्मा का हाथ काफी सध गया था। वे सुंदर पोर्ट्रेट बनाने लगे थे।

एक दिन उन्होंने महाराजा आयिल्यम तिरुनाल से एक अनुरोध किया। बोले, "महाराज मैं आपका पोर्ट्रेट बनाना चाहता हूं। मुझे थोड़ा-सा समय देने की कृपा करें।"

महाराजा तिरुनाल सहर्ष तैयार हो गये।

वे अपनी पत्नी के साथ चित्र बनवाने के लिए बैठने लगे।

रवि वर्मा ने पूरे मनोयोग से उनका चित्र बनाया।

चित्र पूरा हुआ। उसे देखकर महाराजा दंग रह गये। कुछ विदेशी चित्रकारों ने भी उनके चित्र बनाये थे। पर रवि वर्मा के चित्र की तो बात ही अलग थी। उनका चित्र निसंदेह श्रेष्ठ था। सुंदर था। जैसे उन्होंने उसमें जान डाल दी थी। उन्होंने यह बात सबसे कही। कहा, "रवि वर्मा के चित्र में आत्मा है। उसने हमारे मनोभावों को भी बखूबी उतारा है।"

महाराजा आयिल्यम तिरुनाल ने रवि वर्मा का सम्मान करने का निश्चय किया। उन दिनों महाराजा 'वीर श्रृंखला' अलंकरण से योग्य, विद्वान व्यक्तियों का सम्मान करते थे। उन्होंने तय किया, वे रवि वर्मा को इसी अलंकरण से सम्मानित करेंगे। यों, वह अलंकरण कई व्यक्तियों को मिला था। पर अब तक कोई चित्रकार इस अलंकरण से सम्मानित नहीं हुआ था। रवि वर्मा पहले चित्रकार थे, जिन्हें इस अलंकरण से विभूषित किया गया।

महाराजा ने एक दिन दरबार का आयोजन किया। उसमें रवि वर्मा को यह अलकरण प्रदान किया।

इस अलंकरण से रवि वर्मा की ख्याति और बढ़ गयी। लोग उनका आदर करने लगे। पर कुछ लोग ऐसे भी थे, जो रवि वर्मा से जलते थे। वे उन्हें मिले इस सम्मान से वे खुश नहीं थे। पर वे कुछ कर भी नहीं सकते थे।

'वीर श्रृंखला' अलंकरण पाने से रवि वर्मा का उत्साह बढ़ा। उन्हें विश्वास हो गया कि उन्होंने अपने लिए सही मार्ग चुना है। वे उत्साह और उल्लास से चित्रकला की साधना में जुट गये।

रवि वर्मा स्त्रियों के सुंदर चित्र बनाते थे, विशेषकर नायर जाति की स्त्रियों के। उन दिनों तिरुवनन्तपुरम् में एक चर्चा थी। लोग कहा करते थे कि रवि वर्मा के निवास में स्वर्गलोक की अप्सराएं आया करती हैं। उनका आशय था कि रवि वर्मा की रंगशाला में सुंदर स्त्रियों के चित्रों की भरमार है।

वन में एकाकी दमयंती

(साभार : श्री भवानी चित्र संग्रहालय, औंध, सतारा)

रवि वर्मा केवल सुंदर स्त्रियों के ही चित्र नहीं बनाते थे, वे प्राकृतिक दृश्यों का भी चित्रांकन करते। उनकी दिनचर्या नियमित थी। स्नान-ध्यान, पूजा-पाठ, भ्रमण। चित्रांकन। रामायण, महाभारत, भागवत व पुराणों का अध्ययन। कभी-कभी वे पंडितों को निमंत्रित करते। उनसे पुराणों के प्रसंग सुनते। वे सोचते थे कि पौराणिक प्रसंगों पर सुंदर चित्र बनाये जा सकते हैं।

ठीक यंही बात दूसरे कला-प्रेमी भी सोचते थे। नृत्य-संगीत में पौराणिक कथाएं कही जाती थीं पर चित्रकला में इन विषयों का समावेश नहीं हुआ था।

सन 1871 की बात है। मद्रास में एक सभा हुई थी। उसमें मद्रास के गवर्नर लॉर्ड नेपियर का भाषण हुआ था। लॉर्ड नेपियर विद्वान थे। रामायण, महाभारत, पुराणों का उन्होंने अध्ययन किया था।

अपने भाषण में लॉर्ड नेपियर ने एक महत्वपूर्ण बात कही थी। उन्होंने कहा था कि रामायण, महाभारत और पुराणों में चित्रांकन के लिए अपार विषय हैं। यदि भारतीय चित्रकार यूरोपीय चित्र-शैली का उपयोग कर इन विषयों पर चित्र बनायें, तो चित्रकला समृद्ध होगी।

रवि वर्मा ने लॉर्ड नेपियर का भाषण नहीं सुना था। वे तो पांच सौ मील दूर रहते थे, पर उनके मन में भी यही विचार उठे थे। वह भी काफी वर्ष पहले।

उन दिनों मद्रास में एक चित्र-प्रदर्शनी का आयोजन होता था। उसमें देशी चित्रकार भाग लेते थे। भारत आये विदेशी चित्रकार भी इस प्रदर्शनी में अपने चित्र भेजते थे। प्रदर्शनी में आने वाले श्रेष्ठ चित्रों को पुरस्कार भी दिया जाता था। सर्वश्रेष्ठ चित्र को मद्रास के गवर्नर की ओर से स्वर्ण पदक दिया जाता था।

ऐसी ही एक प्रदर्शनी सन 1873 में हुई।

महाराजा आयिल्यम तिरुनाल ने रवि वर्मा से कहा, "तुम भी इस प्रदर्शनी में भाग लो।"

महाराजा के परामर्श को रवि वर्मा ने मान लिया। उन्होंने इस प्रदर्शनी के लिए एक नायर स्त्री का चित्र चुना। उसके साथ एक और चित्र का भी चुनाव किया। ये दोनों चित्र प्रदर्शनी की प्रतियोगिता के लिए भेज दिये गये।

त्रावणकोर राज्य के राज-चित्रकार रामस्वामी नायकर ने भी इस प्रदर्शनी में अपने चित्र भेजे। उन्हें आशा थी कि उनके चित्रों को पुरस्कार मिलेगा। इससे खोयी हुई प्रतिष्ठा फिर मिल जाएगी। रवि वर्मा को मिले 'वीर श्रृंखला' सम्मान से वे प्रसन्न नही थे। उनका विचार था कि वे रवि वर्मा से वरिष्ठ चित्रकार हैं। यह अलकरण उन्हें ही मिलना चाहिए था।

मद्रास चित्र-प्रदर्शनी में कई चित्रकारों ने चित्र भेजे थे। उनमें कुछ विदेशी चित्रकार भी थे।

महाराजा तिरुनाल से आज्ञा लेकर रवि वर्मा मद्रास गये।

उन दिनों तिरुवनन्तपुरम् से मद्रास की यात्रा आज-जैसी सरल नहीं थी। मद्रास के लिए जिस स्टेशन से उन्हें ट्रेन मिलती, वह सौ मील दूर था। पर रवि वर्मा के मन में उत्साह था। फिर यात्रा करने में उन्हें आनंद भी आता था। कारण, यात्रा में नये-नये दृश्य देखने को मिलते थे। नये-नये लोगों से मिलने-जुलने का अवसर मिलता था। यात्रा से मिलने वाले लाभ कई थे। उनकी तुलना में यात्रा मे मिलने वाले कष्ट की कोई बिसात नहीं थी।

सो, एक दिन रवि वर्मा बैलगाड़ी में बैठकर रवाना हुए। सौ मील की यात्रा कर वे उस स्टेशन पर पहुंचे। वहां से रेल द्वारा मद्रास। मद्रास में वे दीवान बहादुर रघुनाथ राव के घर ठहरे। उन्होंने उनकी सुविधा का पूरा ध्यान रखा। नियत तिथि पर चित्र प्रदर्शनी शुरू हुई। एक से बढ़कर एक चित्र। कलाप्रेमियों की भीड़ लग गई।

फिर एक दिन चित्र-प्रतियोगिता के परिणामों की घोषणा हुई। सब सांस थाम कर बैठे थे। निर्णायक परिणामों की घोषणा के लिए उठे। सभा में सन्नाटा छा गया। किसे मिलेगा प्रथम पुरस्कार। सभी के मन में यह जानने की उत्सुकता थी। अंततः प्रतीक्षा की घड़ी समाप्त हुई। निर्णायक ने घोषणा की – 'प्रथम पुरस्कार रवि वर्मा को 'नायर स्त्री' के चित्र के लिए।'

सभा-स्थल तालियों की गड़गड़ाहट से गूंज उठा।

इस पुरस्कार से रवि वर्मा का सम्मान और बढ़ गया। इस प्रदर्शनी से रवि वर्मा को एक और लाभ हुआ। उन्हें दूसरे चित्रकारों के बनाये चित्रों को भी देखने का अवसर मिला। चित्र-प्रदर्शनी में वे घंटों एक-एक चित्र को देखते। चित्रकारो के रंग-संयोजन पर उनका विशेष ध्यान था। उन्होंने देखा कि विदेशी चित्रकारों का रंग-संयोजन संतुलित है।

पुरस्कार-प्राप्त कर रवि वर्मा तिरुवनन्तपुरम् लौट आये। महाराजा तिरुनाल को सूचना मिल चुकी थी कि रवि वर्मा को प्रथम पुरस्कार मिला है। वे बेहद प्रसन्न थे। रवि वर्मा उन्हें प्रणाम करने गये। महाराजा ने स्नेह से उन्हें आशीर्वाद दिया। बोले, "रवि वर्मा, मुझे प्रसन्नता है कि तुम्हारी कला को पहचाना गया। पर यह पुरस्कार पाकर ही संतुष्ट मत हो जाना। तुम्हें अभी और आगे बढ़ना है। अपना विशेष स्थान बनाना है। जाओ, अपने कार्य में निष्ठापूर्वक जुट जाओ।"

रवि वर्मा फिर से काम में जुट गये। उनकी रंगशाला में चित्रकला-प्रेमियों की भीड़ लगी रहती। महाराजा ने एक व्यवस्था और करवा दी थी। रवि वर्मा के लिए 'माडलों' का प्रबंध करवा दिया था। कुलीन घरानों की सुंदर युवतियां, विवाहित स्त्रियां निस्संकोच रंगशाला में आतीं। उन्हें सामने बैठाकर रवि वर्मा उनका चित्रांकन करते।

सन 1873 में ही वियेना (आस्ट्रिया) में एक अंतर्राष्ट्रीय चित्र-प्रदर्शनी का आयोजन हुआ। रवि वर्मा ने इस प्रदर्शनी के लिए भी चित्र भेजे। इस प्रदर्शनी

में भी रवि वर्मा को पदक मिला। 'श्रेष्ठता का प्रमाणपत्र' देकर भी उन्हें सम्मानित किया गया।

सन 1874 मे मद्रास मे फिर एक चित्र प्रदर्शनी आयोजित हुई। इसमें रवि वर्मा ने भी एक चित्र भेजा। यह चित्र एक तमिल युवती का था। उसे एक वाद्य-यंत्र बजाते हुए चित्रित किया गया था। इस चित्र को भी गवर्नर के स्वर्णपदक से सम्मानित किया गया। बाद में महाराजा त्रावणकोर ने यह चित्र इंग्लैंड के प्रिंस ऑव वेल्स को भेंट किया। आगे चलकर यही प्रिंस ऑव वेल्स राजा एडवर्ड सप्तम बने।

दिन इसी तरह बीतते रहे। अब रवि वर्मा ने पौराणिक प्रसंगों को चित्रित करना शुरू किया। उन्होंने कालिदास के नाटक 'अभिज्ञान शाकुंतलम्' का एक प्रसंग चुना। कालिदास का यह नाटक सारे संसार में प्रसिद्ध हो चुका था। उसका अंग्रेजी और दूसरी भाषाओं मे भी अनुवाद हो चुका था।

रवि वर्मा ने 'शाकुंतलम्' का जो प्रसंग चुना, वह मर्मस्पर्शी था। इसमें शकुंतला को दुष्यंत के लिए प्रेम-पत्र लिखते हुए दिखाया गया था। यह चित्र सुंदर बन पड़ा। 'शाकुंतलम्' से प्रेरित रवि वर्मा का यह प्रथम चित्र था। रवि वर्मा ने इस चित्र को भी एक चित्र-प्रतियोगिता में भेजा। वहां इस चित्र को गवर्नर जनरल का स्वर्णपदक मिला।

यह चित्र अनेक विदेशी विद्वानों ने भी देखा। इनमें एक थे – सर मोनियर विलियम्स। उन्होंने 'शाकुंतलम्' का अग्रेजी में अनुवाद किया था। उन्हें भी यह चित्र बहुत पसंद आया। उन्होंने रवि वर्मा से अनुरोध किया। कहा कि वे इस चित्र को प्रकाशित करने की अनुमति दें। सर मोनियर विलियम्स अपने अनुवाद के साथ मुखपृष्ठ पर यह सुंदर चित्र प्रकाशित करना चाहते थे। रवि वर्मा इससे सहमत हो गये। सर मोनियर विलियम्स की पुस्तक खूब बिकी। इसमे प्रकाशित रवि वर्मा के चित्र की भी खूब प्रशंसा हुई। इस चित्र से उन्हें अंतर्राष्ट्रीय ख्याति मिली।

मालावारी युवती

(साभार : श्री जयचामराजेंद्र कला दीर्घा, जगन मोहन पैलेस, मैसूर)

पर जीवन में सदैव सुख नहीं मिलता। कभी-कभी परिस्थितियां अकारण परेशानी पैदा कर देती हैं। रवि वर्मा के साथ भी यही हुआ।

राजमहल में मतभेद उभर आये थे। महाराजा आयिल्यम तिरुनाल और उनके छोटे भाई विशाखम के संबंध कटु हो गये थे। कुछ लोग महाराजा तिरुनाल के साथ थे। कुछ विशाखम के।

संदेह आत्मीय संबंधों में दरार पैदा कर देता है। अपने संबंधी, हितैषी, मित्र ही शत्रु लगने लगते हैं।

त्रावणकोर राज्य के दीवान टी. माधवराव युवराज विशाखम के गुरु थे। यों महाराज उन्हें बहुत मानते थे। पर विशाखम के गुरु होने के नाते वे भी संदेह के घेरे में आ गये। टी. माधवराव को लगा, अब यहां रहना ठीक नहीं। जहां संबंधों में दरार आ जाए, वहां क्या रहना? संबंधों को और क्यों कटु किया जाए? उन्होंने अपने पद से त्यागपत्र दे दिया। टी. माधवराव योग्य थे। विद्वान थे। एक कुशल प्रशासक के रूप में उनकी ख्याति थी। त्रावणकोर से हटते ही उन्हें बड़ौदा के महाराजा ने अपने यहां बुलवा लिया।

टी. माधवराव की भांति केरल वर्मा पर भी संदेह किया जाने लगा। यह भ्रम फैला गया कि वे भी महाराजा तिरुनाल के विरुद्ध षड्यंत्र कर रहे हैं। उन्हें पहले एलेप्पी जाने को कहा गया। फिर वहां से हरिपाद भेजा गया।

रवि वर्मा पर भी आक्षेप किये जाने लगे। वे केरल वर्मा के साढ़ू भाई थे। केरल वर्मा की पत्नी रानी लक्ष्मीबाई थीं। उन्हीं की छोटी बहन पुरुतार्थी से रवि वर्मा का विवाह हुआ था। अतः वे भी केरल वर्मा के संबंधी थे।

रवि वर्मा को इन मिथ्या आरोपों से बेहद कष्ट हुआ।

वे महाराजा तिरुनाल का हृदय से आदर करते थे। महाराजा तिरुनाल ने ही इनके जीवन को दिशा दी थी। उनके विरुद्ध जाने की तो वे कल्पना भी नहीं कर सकते थे। लेकिन वे यह भी जानते थे कि लोग उनके विरुद्ध

भी महाराजा के कान भर रहे हैं। यद्यपि, महाराजा ने उनसे स्वयं कभी कुछ नहीं कहा। पर रवि वर्मा को यह खबर दी गयी थी कि महाराजा उनसे भी नाराज है।

रवि वर्मा ने तय किया, तिरुवनन्तपुरम् छोड़ना ही ठीक रहेगा। इस समय महाराजा को सफाई देने से भी कोई लाभ नही होगा। उचित है, षड्यन्त्र और संदेह के इस वातावरण से दूर चले जाए।

और एक दिन महाराजा की अनुमति लेकर रवि वर्मा मावलेकिरा लौट गये। वहा पत्नी पुरुतार्थी थी। उनके अपने बच्चे थे। अब मावलेकिरा ही उनका कार्य-क्षेत्र था। वे पत्नी तथा बच्चो के साथ समय बिताते और अपनी रंगशाला मे चित्रांकन करते।

धीरे-धीरे एक वर्ष बीत गया। संदेह के बादल छंट गये। अब रवि वर्मा ने पुनः तिरुवनन्तपुरम् लौटने का निश्चय किया। तिरुवनन्तपुरम् में महाराजा तिरुनाल स्नेह से उनसे मिले। रवि वर्मा को देखकर उन्हें बहुत प्रसन्नता हुई।

रवि वर्मा ने देखा, महाराजा तिरुनाल कुछ दुबले हो गये हैं। रुग्ण से लग रहे हैं। उन्होने अपने मन की बात महाराजा से कही भी। पर महाराजा ने हंस कर उनकी बात टाल दी। बोले, "रवि, अब मैं बूढ़ा हो गया हूं। पता नहीं कब बुलावा आ जाए!"

और 30 मई, 1880 को महाराजा तिरुनाल का प्राणांत हो गया।

रवि वर्मा को उनके निधन से गहरा झटका लगा। उन्हें लगा, जैसे वे अनाथ हो गये हैं। महाराजा तिरुनाल उनके संरक्षक थे। उनके प्रोत्साहन पर ही रवि वर्मा ने चित्रकला अपनायी थी। महाराजा ने रवि वर्मा की सुख-सुविधाओं, आवश्यकताओं का पूरा ध्यान रखा था। पर अब स्थितियां बदलने लगी थीं।

नये महाराजा विशाखम तिरुनाल से उनके कभी घनिष्ठ संबंध नहीं रहे। इसका कारण भी था। विशाखम राज-चित्रकार रामस्वामी नायकर पर विशेष स्नेह रखते थे। पर रवि वर्मा ने प्रतीक्षा करना उचित समझा। उन्होंने सोचा, व्यर्थ की आशंकाएं करने से क्या लाभ! आशंकाएं संदेह को जन्म देती हैं। संदेह संबंध बिगाड़ता है। फिर नये महाराजा विशाखम ने कोई अनुचित बात भी नहीं की थी।

विशाखम स्वयं लेखक थे। ललित कलाओं से उन्हें भी प्यार था। वे भी त्रावणकोर राज्य में ललित कलाओं को संरक्षण देना चाहते थे।

एक दिन उन्होंने रवि वर्मा से कहा, "आपने पौराणिक प्रसंगों पर चित्र बनाने का कार्य शुरु किया था न! मैंने आपका शकुंतला वाला चित्र देखा है। मैं चाहता हू कि आप रामायण के प्रसंगों पर भी चित्र बनाएं। मैंने आपके लिए एक प्रसग भी सोचा है। मैं चाहता हूं कि आप सीता का भूमि प्रवेश वाला प्रसंग चित्रित करें।"

"जैसा आपका आदेश!" रवि वर्मा ने उत्तर दिया।

अपनी रंगशाला लौटकर रवि वर्मा ने रामायण निकाली। सीता के भूमि प्रवेश का प्रसंग बार-बार पढ़ा। धीरे-धीरे उनके मन में चित्र की कल्पना उभरने लगी। फिर रवि वर्मा ने चित्र-फलक पर इस कल्पना को आकार देना प्रारंभ किया।

राम की राज-सभा का दृश्य।

सभी सभासद उपस्थित हैं। ऋषि हैं, मुनि हैं, मंत्री हैं। राम के पुत्र लव-कुश भी हैं। उन सबके सामने सीता पृथ्वी माता की गोद में बैठी हुई हैं। पृथ्वी माता उन्हें अपने लोक ले जा रही हैं।

आकृतिया बन गयीं। अब उनमें रंग भरने का कार्य शुरू हुआ। रवि वर्मा ने प्रत्येक के चेहरे के भावो का अंकन किया। राम के मुख का, सीता के मुख का, लव के मुख का। सीता के मुख की पीड़ा व्यथित करने वाली थी।

एक दिन चित्र पूरा हुआ। रवि वर्मा ने महाराजा विशाखम को उसे दिखाया। क्षणभर के लिए उन्हें महाराजा आयिल्यम तिरुनाल की याद आयी। महाराजा चित्र देखकर कितने प्रसन्न होते! रवि वर्मा को दीवान टी. माधवराव की भी याद हो आयी। वे भी कला के पारखी थे। पर महाराजा तो अब इस लोक मे नहीं थे। टी. माधवराव भी बड़ौदा में थे।

नये महाराजा विशाखम ने चित्र देखा। वे रवि वर्मा की कला का लोहा मान गये। उन्होने चित्र की हृदय से प्रशंसा की।

xxx xxx

कुछ दिनो बात एक घटना घट गयी।

मद्रास के गवर्नर ड्यूक ऑव बकिंघम तिरुवनन्तपुरम् की यात्रा पर आये। वे रवि वर्मा के प्रशंसक थे। कारण, सन 1878 में रवि वर्मा ने उनका पोर्ट्रेट बनाया था। अपने इस पोर्ट्रेट से वे बहुत प्रसन्न हुए थे। ड्यूक ऑव बकिंघम ने एक विदेशी चित्रकार से भी अपना पोर्ट्रेट बनवाया था। पर उसमें इस चित्र जैसी बात नहीं थी। उन्होंने कहा भी था, "मैंने उस चित्रकार को अठारह सिटिंग दी थीं। पर उसका बनाया पोर्ट्रेट तो इस पोर्ट्रेट का आधा भी नहीं है।"

इसीलिए वे जब तिरुवनन्तपुरम आये तो रवि वर्मा से भी मिले। उन्होंने रवि वर्मा से कहा, "मै आपका स्टूडियो देखना चाहता हूं।"

रवि वर्मा चिंता में पड़ गये। अब स्टूडियो कहां था? उसे तो नये महाराजा ने बंद करवा दिया था।

रवि वर्मा ने युक्ति से काम लिया। बोले, "आप क्यों कष्ट करेंगे। मै स्वयं आपके आवास-स्थल पर चित्र लेकर उपस्थित हो जाऊंगा।"

ड्यूक ऑव बकिंघम ने उनका सुझाव मान लिया।

नियत समय पर रवि वर्मा अपने चित्र लेकर पहुंचे। उस समय ड्यूक ऑव बकिंघम महाराजा विशाखम से वार्तालाप कर रहे थे।

रवि वर्मा ने ड्यूक और महाराजा का अभिवादन किया

ड्यूक ने उन्हें बैठने के लिए कहा।

पर रवि वर्मा खड़े रहे।

महाराजा के सामने कैसे बैठें। रवि वर्मा दरबार के रीति-रिवाज जानते थे। वे उनका पालन भी करते थे। वे नहीं बैठे। ड्यूक चित्रकारों की, कलाकारों की कद्र करना जानते थे। यह कैसे हो सकता है कि एक श्रेष्ठ चित्रकार खड़ा रहे। और वे बैठे-बैठे उससे बात करें।

ड्यूक खड़े हो गये।

अब तो महाराजा विशाखम को भी उठना पड़ा। उनका बैठे रहना सौजन्यता नहीं होती।

ड्यूक ने रवि वर्मा के चित्र देखे। उनकी प्रंशसा की। खड़े-खड़े तीनों वार्तालाप करने लगे।

रवि वर्मा ने महाराजा की ओर देखा। उनके मुख पर क्रोध का भाव था। एक चित्रकार के लिए उन्हें उठना पड़ा। वे इसे सहन नहीं कर पा रहे थे। उनके लिए अपने भाव छिपाना भी कठिन हो रहा था।

रवि वर्मा ने उसी क्षण निश्चय किया। अब तिरुवनन्तपुरम् छोड़ देना ही उचित है। महाराजा का कोप-भाजन बनकर रहने मे क्या लाभ! इससे उनका अपना मन भी सदैव अशांत रहेगा। अशांत मन से वे चित्रकला की साधना नही कर पाएंगे।

अतः शीघ्र ही उन्होने तिरुवनन्तपुरम छोड़ने की तैयारी शुरू कर दी। महाराजा विशाखम से अनुमति लेकर वे पहले किलिमानूर चले गये। वहां से मावलेकिरा जाने का कार्यक्रम था।

रवि वर्मा के जाते ही उनकी रंगशाला बंद हो गयी।

राजकीय रंगशाला बद होने के बाद उन्होंने अपनी नयी रंगशाला बनायी थी। यह रंगशाला उनके कृष्ण विलासम् पैलेस में थी। जब तक रवि वर्मा तिरुवनन्तपुरम् में रहे, कृष्ण विलासम् पैलेस कलातीर्थ बना रहा। दूर-दूर के चित्रकार वहां आते। दक्षिण भारत जाने वाले उत्तर भारत के कला-प्रेमी भी वहा अवश्य जाते। उनका आकर्षण होता-कृष्ण विलासम् पैलेस। वहां रवि वर्मा के चित्र देखकर वे प्रसन्न होते। कहते, 'राजा रवि वर्मा की जय!'

मलयाली भाषी लोगों को यह समझ नहीं आता। वे सोचते, प्रशंसा का यह कौन-सा तरीका है?

पर अब कृष्ण विलासम् पैलेस सूना हो गया था।

रह गयी थीं केवल कुछ स्मृतिया।

रवि वर्मा के चरित्र की स्मृतियां। उनके स्वभाव की स्मृतियां।

रवि वर्मा स्पष्ट वक्ता तो थे ही।

तिरुवनन्तपुरम् के कला-प्रेमी एक घटना को भुलाये नही भूलते।

उन दिनो यहां पर बालामणि नामक एक अभिनेत्री थी। बड़े-बड़े लोग उसके चाहने वाले थे। वह चाहती थी कि रवि वर्मा उसका भी एक पोर्ट्रेट बनाए। उसने उनसे अनुरोध किया। पर रवि वर्मा तो किसी और धातु के

बने थे। वे बालामणि का चित्र नहीं बनाना चाहते थे। इसका भी एक कारण था। उसे देखकर उन्हें चित्र बनाने का चाव ही नहीं होता था। उन्होंने बालामणि से कहा, "बुरा न मानना। तुम्हारे चेहरे पर कोई भाव ही नहीं हैं। तुम अभिनय भी नहीं कर सकतीं। फिर तुम्हारा चित्र बनाने के लिए मुझे महाराजा से भी अनुमति लेनी पड़ेगी।"

बालामणि समझ गयी। रवि वर्मा चित्र बनाना ही नहीं चाहते। उसने हठ नहीं किया। पर मन ही मन वह रवि वर्मा से नाराज हो गयी। अपनी इस नाराजगी की उसने औरों से चर्चा भी की। शीघ्र ही यह बात फैल गयी।

इस घटना से रवि वर्मा की प्रतिष्ठा ही बढ़ी।

लोगों ने कहा, 'वे सच्चे कलाकार हैं। स्वाभिमानी भी हैं। लोभ लालच उन्हें डिगा नहीं सकता।'

रवि वर्मा के तिरुवनन्तपुरम् छोड़ने से कई लोगों को दुःख हुआ। पर वे कर भी क्या सकते थे?

उधर किलिमानूर पहुंच कर रवि वर्मा बहुत प्रसन्न थे। किलिमानूर की रंगशाला को देखकर उन्हें बहुत अधिक खुशी हुई।

इस रंगशाला मे उनकी बहन मंगला चित्रकारी करती थी। रवि वर्मा के छोटे भाई राज वर्मा ने मद्रास में चित्रकारी सीखी थी। वे भी इसी रंगशाला में चित्र बनाते थे। मामा राजा राज वर्मा उनके संरक्षक थे। अब रवि वर्मा भी आ गये थे।

किलिमानूर में रवि वर्मा के दिन खुशी से बीतने लगे। यहां का वातावरण मुक्त था। तिरुवनन्तपुरम् राजघराने के बंधन नहीं थे।

रवि वर्मा सुबह घुड़सवारी करते। सारा दिन रंगशाला में बिताते। शाम को मां के साथ भजन-कीर्तन करते।

कभी-कभी वे पत्नी पुरुतार्थी और अपने बच्चों से मिलने मावलेकिरा चले जाते। उनके दो पुत्र थे। एक का नाम था - राम। दूसरे का नाम था - केरल।

xxx xxx

एक दिन की बात है।

रवि वर्मा मावलेकिरा से किलिमानूर लौटे थे। अपने निवास के सामने एक सजी-धजी बैलगाड़ी देखकर उन्हें आश्चर्य हुआ। तभी छोटे भाई राज वर्मा आ गये।

रवि वर्मा ने उनसे पूछा, "कोई अतिथि आया है क्या?"

राज वर्मा ने उत्तर दिया, "हां, दीवान माधवराव आये हैं।"

"दीवान माधवराव!"

रवि वर्मा प्रसन्न हो उठे। पूछा, "कहां हैं वे?"

"मामाजी के पास!"

"अच्छा! मामाजी से कहो, मैं आ गया हूं। यात्रा में वस्त्र गंदे हो गये हैं। उन्हें बदल कर उनके पास पहुंचता हूं।"

कुछ देर बाद वे दीवान माधवराव के पास थे। माधवराव उन्हें देखकर बहुत प्रसन्न हुए। लबी अवधि के बाद दोनों की भेट हो रही थी।

वे लोग काफी देर तक बातें करते रहे।

अगले दिन माधवराव ने रवि वर्मा से कहा, "रवि, मैं चाहता हूं कि तुम किलिमानूर छोड़ दो।"

"क्यों?" रवि वर्मा ने चौंक कर पूछा।

माधवराव बोले, "रवि, अब किलिमानूर ही नहीं, तिरुवनन्तपुरम् भी तुम्हारे लिए छोटी जगह है। मैने कई विदेशी चित्रकारों के चित्र देखे हैं। वे यहा आते हैं। राजा-महाराजाओ के पोट्रेट बनाते हैं। पर उनके चित्रों में तुम्हारे चित्रो-जैसी बात नहीं। लेकिन किलिमानूर मे तुम्हारी स्थिति जंगल के मोर-जैसी है। जंगल मे मोर नाचा किसने देखा! यह एक कहावत है! किलिमानूर मे तुम्हारी प्रतिभा संकुचित हो जाएगी। मै चाहता हूं कि तुम बड़ी जगह में रहो। ऐसी जगह, जहां राजा-महाराजा आते हैं।"

"ऐसी जगह कौन-सी है!" रवि वर्मा ने उत्सुकता से पूछा।

"बंबई! तुम और राज वर्मा बंबई (मुंबई) चलो। वहां मेरे पास एक बंगला है। तुम लोगों को कोई कष्ट नहीं होगा। बंबई में तुम्हें नया वातावरण मिलेगा। वह महानगर है। राजा-महाराजा देशी और विदेशी बड़े-बड़े लोग वहां आते

चांदनी रात में महिला
(साभार : श्री जयचामराजेंद्र कला दीर्घा, जगन मोहन, पैलेस, मैसूर)

हैं। मेरा भी कुछ राजा-महाराजाओं से परिचय है। मेरी सलाह मानो। बंबई चलो। दो दिन में तैयारी कर लो। मै भी तुम्हारे साथ बंबई चलूंगा। तुम्हारी सारी व्यवस्था करके बड़ौदा चला जाऊगा।"

दीवान माधवराव का सुझाव रवि वर्मा को जंच गया। उन्होंने मामा राजा राज वर्मा, माता-पिता, भाइयों से परामर्श किया। सबकी राय बनी कि यह एक अच्छा अवसर है। इसका लाभ उठाना चाहिए।

जीवन में अच्छे अवसर कम आते हैं। पर हम उसमें छिपी चुनौतियों से घबरा जाते हैं। हम जानी-पहचानी जगह, सुख-सुविधाभरी जिंदगी छोड़कर जाना नहीं चाहते। तरह-तरह के संदेहो में घिरे रहते हैं। इसी उहापोह में अवसर हाथ से निकल जाता है। बाद में हम पछताते हैं। पर तब क्या लाभ!

समझदार, साहसी लोग नये अवसरो का लपककर स्वागत करते हैं। वे चुनौतियों से घबराते नहीं।

रवि वर्मा साहसी थे। उन्होंने माधवराव की बात मान ली।

किलिमानूर सुदूर दक्षिण का एक कस्बा।

बंबई—भारत की एक महानगरी। उद्योग-व्यापार का केंद्र।

किलिमानूर —शांत, जंगल के बीच स्थित एक सरोवर की तरह।

बंबई—निकट के सागर की तरह ही कोलाहलपूर्ण। चारों ओर गहमा-गहमी। भाग-दौड़। यों, उन दिनों की बंबई आज-जैसी न थी। फिर भी, किलिमानूर की तुलना में तो यह भीड़ भरी ही थी।

किलिमानूर से बंबई की यात्रा भी आसान नहीं थी। पर्वतों, घने वनों, गहरी नदियों को पार कर ही बंबई पहुंचा जा सकता था। यात्रा कठिनाइयों भरी थी।

रवि वर्मा अपने दोनों भाइयों राज वर्मा और गोदा वर्मा के साथ बंबई रवाना हुए। मामा राजा राज वर्मा ने दो सेवक भी साथ भेज दिये थे। कई दिनों की यात्रा के पश्चात रवि वर्मा बंबई पहुंच गये। दीवान टी. माधवराव ने उन्हें निवास-स्थान का पता दे दिया था। वे सब इसी स्थान पर पहुंचे।

वह एक भव्य बंगला था। दो मंजिला। सामने छोटा-सा बगीचा था। यह बंगला आरामदेह था।

बंगले की ऊपरी मंजिल के एक कक्ष में रंगशाला बनायी गयी। अन्य कक्षों को भी सुसज्जित कर दिया गया।

अब बंबई ही रवि वर्मा का नया कार्यक्षेत्र था।

माधवरावजी ने रवि वर्मा का अनेक लोगो से परिचय करवा दिया। चित्रकला के प्रेमी उनका नाम सुन चुके थे। अब वे बंबई मे रहेंगे, यह जानकर उन्हें प्रसन्नता हुई।

एक दिन माधवरावजी ने रवि वर्मा को बीकानेर के महाराजा से मिलवाया। वे चित्रकार से मिलकर प्रसन्न हुए।

दूसरे दिन माधवरावजी महाराजा बीकानेर के साथ बीकानेर चले गये। रवि वर्मा को अब स्वयं स्थान बनाना था।

बंबई मे बालकेश्वर का मदिर है। रवि वर्मा प्रायः इस मदिर मे जाते। इस मंदिर मे भी उनका अनेक लोगों से परिचय हुआ। कुछ महिलाओं से भी वे मिले। उनमे से कुछ महिलाओ ने उनसे चित्र बनवाये।

इसी बीच पूना में एक चित्र प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। माधवरावजी ने इस प्रदर्शनी मे रवि वर्मा का बनाया चित्र भी भिजवाया। यह वही नायर युवती का चित्र था। इसे ही मद्रास की प्रदर्शनी में गवर्नर का पदक मिला था। साथ ही उन्होंने 'सीता भूमि प्रवेशम्' चित्र भी भेजा था। तिरुवनन्तपुरम्-यात्रा के दौरान माधवरावजी ने वह चित्र बड़ौदा दरबार के लिए खरीद लिया।

पूना की प्रदर्शनी में ये दोनों चित्र बेहद पसंद किये गये। 'नायर युवती' पर तो उन्हें बड़ौदा के महाराजा का स्वर्णपदक मिला।

स्वयं माधवरावजी उन्हें यह पदक देने आये। उन्होंने रवि वर्मा को एक और सूचना दी। बतलाया कि बंबई के गवर्नर सर जेम्स फर्म्युसन भी प्रदर्शनी देखने आये थे। उन्हें भी यह चित्र बहुत पसंद आया। उन्होंने अनुरोध किया है कि इस चित्र की एक अनुकृति उन्हें भी दी जाए।

रवि वर्मा ने इस चित्र की दो अनुकृतियां पहले ही तैयार कर रखी थीं। उन्होने उनमें से एक अनुकृति माधवरावजी को दे दी। माधवरावजी रवि वर्मा की सूझ-बूझ से बहुत प्रभावित हुए।

कुछ दिनो बाद की बात है।

माधवरावजी ने रवि वर्मा को बड़ौदा आने का निमंत्रण दिया। बड़ौदा में सयाजीराव गायकवाड़ का राज्यारोहण समारोह था। माधवरावजी ने उन्हें राजकीय अतिथि के रूप में निमंत्रित किया था।

नियत तिथि पर रवि वर्मा अपने भाइयों के साथ बड़ौदा गये। यह यात्रा आसान थी।

बड़ौदा मे राज्यारोहण-समारोह की धूम थी। चारों ओर उत्सव का वातावरण था। रवि वर्मा ने बड़ौदा नगर देखा। उनका कई नये लोगो से परिचय हुआ। बड़ौदा के नये महाराजा भी उनसे स्नेह से मिले। उम्र में वे छोटे थे, पर ललित कलाओ से उन्हें प्यार था। वे संगीत, चित्रकला के पारखी भी थे।

बड़ौदा में कुछ दिन बिताने के बाद रवि वर्मा बंबई वापस आ गये। पर वे बंबई में अधिक दिन नहीं रह सके। उन्हें किलिमानूर जाना पड़ा। उनके मामा राजा राज वर्मा अचानक बीमार पड़ गये थे। रवि वर्मा अपने मामा को बहुत चाहते थे। वे उनके मामा ही नहीं थे, वे उनके गुरु भी थे। राजा राज वर्मा संन्यासियों-जैसा जीवन व्यतीत कर रहे थे। रवि वर्मा चाहते थे कि जितनी जल्दी हो, किलिमानूर पहुंच जाएं।

बबई से कई ट्रेनें बदलकर तिनेवली पहुंचना था। फिर वहां से किलिमानूर। कई दिनों की यात्रा के बाद आखिर वे तिनेवली पहुंच गये। अब किलिमानूर तक बैलगाड़ी से सफर करना था।

अंत में एक सुबह वे किलिमानूर पहुंच ही गये। सबका मन आह्लाद से भर गया। घर पहुंचने पर किसे प्रसन्नता नहीं होती? और जब कई कष्ट झेलकर पहुंचा जाए तो आनंद की सीमा ही नहीं रहती।

घर पहुंचकर रवि वर्मा मामा से मिले। गेरुए वस्त्रों में उनका व्यक्तित्व और भव्य हो गया था। वे अपने माता-पिता और बहन से भी मिले।

किलिमानूर में कुछ दिन रहने के बाद वे मावलेकिरा गये। वहां उनकी पत्नी पुरुतार्थी थी। दोनों बेटे राम और केरल थे। रंगशाला भी ज्यों की त्यो थी।

पर मावलेकिरा मे भी रवि वर्मा अधिक दिन नहीं रह पाये। एक दिन उनके छोटे भाई राज वर्मा मावलेकिरा पहुंचे। उन्होंने रवि वर्मा को बताया कि मामाजी की तबीयत ज्यादा खराब है।

रवि वर्मा किलिमानूर पहुचे। रास्ते भर मामा के स्वास्थ्य को लेकर वे परेशान थे।

घर पहुंचते ही वे तत्काल मामा के पास गये। वे लेटे हुए थे। बहुत कमजोर दिखाई दे रहे थे। रवि वर्मा को लगा, मामा अब जीवन-यात्रा पूरी करने ही वाले है। उन्होने उनका एक पोट्रेट बनाया। राजा राज वर्मा चित्र देखकर हंस पड़े। बोले, "कोच्चू, तू तो बहुत कुशल चित्रकार हो गया। पर बेटा, लगता है, मेरी जीवन-यात्रा समाप्त होने वाली है।"

सचमुच राज वर्मा का अंतिम समय निकट आ गया था। वे भी इस बात को जानते थे। वे रवि वर्मा को अपने पास बैठाते। तरह-तरह की शिक्षाएं देते।

और एक दिन उनके प्राण-पखेरू उड़ गये।

सारा घर शोक में डूब गया।

मां उमा भी भाई के निधन से बहुत दुखी हुईं। पर सबसे ज्यादा दुख तो रवि वर्मा को हुआ। उन्हें लगा, माता-पिता के रहते हुए भी वे अनाथ हो गये हैं। आज वे जो भी थे, केवल मामा के कारण।

रवि वर्मा दिन-रात शोक में डूबे रहते। यह देख उनकी मां उमा ने उन्हें समझाया। बोली, "कोच्चू, जन्म के साथ तो मरण जुड़ा हुआ है। तेरे मामा ने अपना सारा जीवन कर्मठता के साथ जिया। उनकी उम्र भी हो चुकी थी।

एक न एक दिन तो सबको जाना है। मै भी चली जाऊंगी। जो होने वाला है, उस पर अधिक शोक क्यो? अब तुम्हें अपने काम में मन लगाना चाहिए।"

पिता ने भी उन्हें समझाया। वे तो विद्वान थे। वेदो के ज्ञाता। उनकी बातों से रवि वर्मा के मन को शाति मिली। अब उन्होने रंगशाला की ओर ध्यान दिया। पर साथ ही उन्होंने एक वर्ष तक शोक मनाने का निश्चय किया।

एक वर्ष तक शोक मनाने का समय उन्होंने पुराणों के अध्ययन में व्यतीता किया। कभी वे किलिमानूर में रहे। कभी पत्नी और बच्चों के पास मावलेकिरा चले जाते। वहां भी रामायण, महाभारत, भागवत का अध्ययन करते रहते।

दीवान माधवराव ने भी पुराणों के अध्ययन की सलाह दी थी। उन्होंने यह भी कहा था कि इन ग्रंथों के प्रसंगों पर चित्रांकन किया करो। रवि वर्मा को उनकी सलाह याद थी। मावलेकिरा में उनके पास समय ही समय था। वे पौराणिक प्रसंगों का चित्रांकन करते। अन्य विषयो के भी चित्र बनाते।

रवि वर्मा एक अच्छे घुड़सवार थे। उन्होंने महाराणा प्रताप और शिवाजी के भव्य चित्र बनाये।

दिन इसी तरह बीत रहे थे। एक दिन उनके छोटे भाई राज वर्मा मावलेकिरा आये। उन्होंने उन्हें बताया कि मैसूर के महाराजा ने उन्हें निमंत्रित किया है। स्वय दीवान पत्र लेकर आये है। अतः आपका किलिमानूर चलना आवश्यक है।

रवि वर्मा तो मावलेकिरा छोड़ना ही चाहते थे। उनका मन वहां नही लग रहा था। वे यात्रा की तैयार करने लगे। पत्नी ने थोड़ी नाराजगी प्रकट की। पर उन्होंने उसे समझा दिया।

किलिमानूर पहुंचकर उन्होंने मैसूर के दीवान साहब से भेंट की। उनका नाम था—राघवन।

श्रीकृष्ण और बलराम
(साभार: श्री जयचामराजेंद्र कला दीर्घा, जगन मोहन पैलेस, मैसूर)

दीवान साहब ने बड़े आदर के साथ महाराजा मैसूर का पत्र रवि वर्मा को दिया। कहा, "महाराजा चामराज वाडियार ने आपको निमंत्रित किया है। वे चित्रकला के प्रेमी हैं। वे जानते हैं कि आपको देश में ही नहीं, विदेशों

मे भी पुरस्कार मिले है। महाराजा की इच्छा है कि आप राज-परिवार के सदस्यो के चित्र बनाए।"

रवि वर्मा ने विनम्रता से कहा, "हम महाराजा साहब की कृपा के लिए आभारी हैं। आप मैसूर चलिए। हम भी यात्रा की तैयारी पूरी कर पहुचते है।"

दीवान साहब राघवन प्रसन्न होकर चले गये।

कुछ दिनों बाद रवि वर्मा भी अपने भाई राज वर्मा के साथ मैसूर पहुंचे। मैसूर में उनका भव्य स्वागत किया गया। महाराजा चामराज वाडियार भी बड़े स्नेह से मिले। रवि वर्मा और उनके साथ आये लोगो के रहने के लिए एक विशेष हवेली का इतजाम किया गया।

रवि वर्मा दो माह तक मैसूर में रहे। इस बीच दिन में राजघराने के सदस्यो के चित्र बनाते। सध्या को सगीत-नृत्य की सभाओं मे भाग लेते।

अब मैसूर मे उनका कार्य समाप्त हो गया। महाराजा चामराज वाडियार चित्र देखर प्रसन्न हुए।

किलिमानूर प्रस्थान का दिन निकट आता जा रहा था। रवि वर्मा तेजी से शेष कार्य पूरा करने में लगे हुए थे। एक दिन दीवान राघवन ने रवि वर्मा को महाराजा का संदेश दिया। दूसरे दिन प्रातः उन्हें राजमहल में बुलवाया गया था।

दूसरे दिन प्रातः दोनो भाई राजमहल पहुचे। महाराजा उनसे स्नेह से मिले। फिर दोनो भाइयो को अपने साथ आने को कहा।

महल के बायीं ओर एक विस्तृत आंगन था। उसमें शाही हाथियो की कतार लगी थी।

महाराजा ने रवि वर्मा से कहा, "राजा रवि वर्मा, इन हाथियो मे से दो हाथी पसंद कर लीजिए।"

रवि वर्मा ने दो नन्हें हाथियों को पसद किया। फिर वे अपने आवास लौट आए। चाहते थे कि शेष कार्य पूरा कर किलिमानूर लौट जाए। जब वे अपना कार्य समाप्त कर लौटने लगे तो महाराजा ने पारिश्रमिक स्वरूप एक बड़ी धनराशि दी।

मैसूर से एक दिन रवि वर्मा अपने भाई के साथ किलिमानूर लौट आए। हाथी भी उनके साथ थे। माता-पिता को उनके सम्मान का विवरण पाकर प्रसन्नता हुई। गर्व भी हुआ।

सतान का यश बढने से माता-पिता को प्रसन्नता तो होती ही है।

उसी वर्ष अर्थात् सन् 1885 मे तिरुवनन्तपुरम् मे एक घटना घटी।

महाराजा विशाखम का भी निधन हो गया। अब मूमल तिरुनाल नये महाराजा बने। उन्हें ललित कलाओ से विशेष प्यार नही था। पर वे रवि वर्मा का आदर करते थे। वे जानते थे कि रवि वर्मा के साथ अन्याय हुआ है। उन्होने इस अन्याय के निराकरण का निश्चय किया। उन्होने रवि वर्मा को तिरुवनन्तपुरम् निमत्रित किया।

महाराजा मूमल तिरुनाल ने रवि वर्मा से पूछा, "आपको स्वर्गीय नरेश से कोई शिकायत तो नही थी?"

"नही महाराज, शिकायत कैसी? मेरे मन मे उनके प्रति कोई दुर्भावना नही। मैने सदा उनका आदर किया है।" रवि वर्मा ने उत्तर दिया।

इस उत्तर से महाराजा मूमल तिरुनाल को संतोष हुआ।

अनुकूल अवसर पाकर एक दिन रवि वर्मा ने महाराजा मूमल तिरुनाल को एक सुझाव दिया। कहा, "यहां पर एक कला-दीर्घा की स्थापना की जाए। इससे चित्रकला को बढ़ावा मिलेगा।"

महाराजा मूमल तिरुनाल यह सुझाव टाल गए। कहा, "देखेंगे। अभी और भी कई जरूरी कार्य हैं। कला-दीर्घा की स्थापना में अभी समय लगेगा।"

रवि वर्मा समझ गए। महाराजा की कोई विशेष रुचि नहीं है। फिर उन्होंने यह सुझाव दोबारा नहीं रखा।

समय के पंख होते हैं। वह उड़ता ही जाता है। कभी किसी के लिए नहीं ठहरता। समय को कोई पकड़ नहीं पाया है। हाँ, समय के साथ-साथ चला जा सकता है। पर समय के साथ चलना आसान भी नहीं होता।

रवि वर्मा समय के साथ चल रहे थे।

कभी तिरुवनन्तपुरम्

कभी किलिमानूर

कभी मावलेकिरा

इन तीनों स्थानों में उनका समय बीतता। इसी बीच वे चित्र भी बनाते। देश और विदेश में आयोजित प्रदर्शनियों में भाग लेते।

लेकिन इसी बीच रवि वर्मा को एक और आघात सहना पड़ा।

मामा तो चले ही गए थे। अब उनकी माँ उमा भी बीमार रहने लगी थीं।

रवि वर्मा आशंका से काँप उठे। क्या माँ भी साथ छोड़ देंगी!

पर पूरे जीवन कौन किसका साथ देता है? कभी-न-कभी तो जाना ही पड़ता है। बिछुड़ना ही होता है।

उमा की जीवन-यात्रा भी समाप्त हो गई।

उमा का सभी आदर करते थे। वे कवयित्री थीं। आयुर्वेदिक चिकित्सा भी जानती थीं। अपने इन्हीं गुणों के कारण वे उमा नहीं, गुणवती नामपुली के नाम से जानी जाती थीं।

माँ के निधन से रवि वर्मा को अपार दुख हुआ। वे सदैव उनकी याद किया करते। पुत्र को व्याकुल देखकर पिता ने उसे समझाया। एक बार फिर कहा कि जन्म-मरण तो चक्र है। यह चक्र तो पूरा होना ही है। कोई इसे रोक नही सकता। रोकना भी नहीं चाहिए। यह प्रकृति के विरुद्ध होगा। ईश्वर के विधान के विपरीत होगा। पिता ने कहा, "बेटा, कामकाज में मन लगाओ। तुम्हारी माँ ने जीवन भर अपने कर्तव्य पूरे किए। तुम भी अपने कर्तव्य पूरे करो। शोक से कभी कुछ नहीं मिला है।"

पिता की बातों से रवि वर्मा को सांत्वना मिली।

सन् 1888 की बात है। बड़ौदा के महाराजा गायकवाड़ गरमी मे उटकमंड आए। श्री माधवराव के जरिए उन्होने रवि वर्मा को भी वहाँ बुलवाया। महाराजा गायकवाड़ बड़ौदा मे एक नया राजमहल बनवा रहे थे। उसके दरबार को वे तैल-चित्रो से सुसज्जित करना चाहते थे। उनकी इच्छा थी कि वे चित्र रामायण, महाभारत और पुराणो के प्रसगो पर आधारित हो। रवि वर्मा से उपयुक्त और कोई चित्रकार उन्हे नजर नही आ रहा था।

उन्होने रवि वर्मा से अपनी यह इच्छा व्यक्त की। कहा कि आप नये राजमहल के लिए चित्र बनाएँ।

रवि वर्मा ने पूछा, "महाराज, मै अवश्य यह कार्य करूँगा। कितने चित्रो की आवश्यकता होगी?"

"यही कोई बारह से चौदह।"

"ठीक है, महाराज, पर एक बात है। इसमे समय लगेगा।"

"कोई बात नही। मैं चाहता हूँ कि चित्र सुदर बने।"

"ईश्वर की कृपा होगी तो अवश्य सुंदर बनेगे। एक निवेदन है, महाराज! मै चित्र बनाने के पूर्व सारे देश का भ्रमण करना चाहता हूँ। इच्छा है कि इस देश के विभिन्न स्थलों का, वहा की वेशभूषाओं का तथा जन-जीवन का अध्ययन करूँ।"

दूत के रूप में श्रीकृष्ण

(साभार : श्री जयचामराजेंद्र कला दीर्घा, जगन पैलेस, मैसूर)

ठीक है। यह तो अच्छा सुझाव है। हम इसकी व्यवस्था कर देंगे।"

महाराजा गायकवाड़ से विदा लेकर रवि वर्मा किलिमानूर लौट आए। फिर सारे देश के भ्रमण की तैयारी करने लगे।

एक दिन वे देश-व्यापी यात्रा पर निकल पड़े। भाई राज वर्मा भी साथ थे। दोनों भाइयों ने राजपूताना, दिल्ली, लाहौर, आगरा, अवध, काशी, कलकत्ता आदि की यात्रा की। फिर वे दक्षिण के भी कई स्थलों पर गए—जैसे मायावरम्, चिदाम्बरम्, श्रीरंगम्, मदुरई।

रवि वर्मा को लगा, यह देश कितना विशाल है! कितना विविध है! पहनावा अलग, बोली अलग, खान-पान अलग। पर इस विविधता में भी एकता है। सबकी कला, संस्कृति एक है।

यात्रा कर वे किलिमानूर लौट आए।

किलिमानूर आकर उन्होंने व्यास, वाल्मीकि, कालिदास की रचनाओं का फिर से अध्ययन किया।

इसके बाद उन्होंने चित्र बनाना आरंभ किया।

राज वर्मा और मंगला भी उनकी सहायता करने लगे।

रवि वर्मा ने अनेक चित्र बनाए। बाद में ये चित्र बहुत लोकप्रिय हुए। ये सभी चित्र पौराणिक प्रसगों पर थे।

'विश्वामित्र-मेनका', 'अर्जुन और सुभद्रा', 'द्रौपदी चीर-हरण', 'हरिचंद्र-तरामती', 'शांतनु-गंगा'. 'कीचक-सैरंध्री', 'सीता-स्वयंवर', 'देवकी-कृष्ण'—जैसे शीर्षकों वाले चित्रों की उन्होने रचना की।

सन् 1890 में उन्होंने इन चित्रों का कार्य पूरा किया।

अब ये चित्र बड़ौदा भेजे जाने थे। रवि वर्मा चाहते थे कि तिरुवनन्तपुरम् के कला-प्रेमी भी इन चित्रों को देख लें। उन्होंने बड़ौदा महाराजा से अनुमति माँगी। उन्होंने सूचना भिजवाई, 'अवश्य, वे चित्र प्रदर्शनी में रखे जाएँ।'

तिरुवनन्तपुरम् में इन चित्रों की प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। बड़ी संख्या में कला-प्रेमी इन चित्रों को देखने आए। सब ने रवि वर्मा की कला की प्रशंसा की।

तिरुवनन्तपुरम् में इस चित्र प्रदशनी के आयोजन का एक उद्देश्य था। रवि वर्मा चाहते थे कि लोगों की चित्रकला में रुचि पैदा हो। इसमें वे सफल रहे।

इस प्रदर्शनी की खबर बंबई भी पहुँची। चित्रों को बंबई होते हुए ही बड़ौदा भेजा जाना था। बंबई के कुछ लोग चाहते थे कि वहाँ भी इस प्रदर्शनी का आयोजन हो।

रवि वर्मा को क्या आपत्ति होती!

हाँ, बड़ौदा के महाराजा से अनुमति लेना आवश्यक था। उनकी अनुमति से बंबई मे भी इन चित्रों की प्रदर्शनी की गई। वहाँ भी लोगों ने इन चित्रों की प्रशंसा की।

आखिर, एक दिन चित्र बंबई से बड़ौदा पहुँच ही गए। रवि वर्मा और राज वर्मा भी साथ थे।

बड़ौदा में भी इन चित्रों की एक प्रदर्शनी आयोजित की गई। एक उद्यान में स्थित विशाल भवन में ये चित्र रखे गए।

चित्र देखने के लिए कितने लोग आए, इसे जानने के लिए एक उपाय खोजा गया।

भवन के द्वार पर दो घड़े रखे गए। इनमें से एक घड़ा खाली था। दूसरे में छोटे-छोटे कंकड़ रखे थे, जो दर्शक प्रवेश करता, वह एक कंकड़ उठाकर खाली घड़े में डाल देता।

पहले दिन ही छह सौ लोगों ने ये चित्र देखे। रवि वर्मा प्रसन्न हुए। महाराजा गायकवाड़ को इसकी सूचना मिली, तो वे भी खुश हुए।

अगले दिन एक विचित्र घटना घटी।

लोगों ने इन चित्रों को देखकर हाथ जोड़ने शुरू कर दिए। उनके पास पैसे भी चढ़ाने लगे। यह देखकर रवि वर्मा को आश्चर्य भी हुआ। थोड़ा दुख भी हुआ लोगों की अज्ञानता पर। पर वे क्या कर सकते थे! यह लोगों की

भावना का प्रश्न था। फिर भी उन्हें संतोष था। चलो, किसी बहाने तो लोगो ने चित्र देखे। कुछ के मन मे तो जरूर कला के प्रति चाव उत्पन्न हुआ होगा।

प्रदर्शनी समाप्त होने के पश्चात ये चित्र दरबार-भवन मे लगा दिए गए। स्वय रवि वर्मा ने सारी व्यवस्था की देखभाल की।

उनका कार्य पूरा हो चुका था। अब घर लौटने का समय आ गया था।

रवि वर्मा ने महाराजा गायकवाड़ से वापसी की अनुमति माँगी। महाराजा गायकवाड़ उनसे बहुत प्रसन्न थे। उन्होंने दरबार का आयोजन किया। उसमें सभी सरदार उपस्थित थे। बड़ौदा के विशिष्ट नागरिक भी निमंत्रित थे। महाराजा गायकवाड़ ने स्वयं रवि वर्मा का सम्मान किया। उन्हे और राजा वर्मा को मान-वस्त्र भेंट किए। धनराशि भेट की।

दरबार समाप्त हुआ।

दूसरे दिन रवि वर्मा भाई के साथ बंबई रवाना होने वाले थे। प्रस्थान के पूर्व महाराजा गायकवाड़ उनसे मिलने आए। उन्होने उन्हें एक अनोखी भेट दी।

यह भेंट क्या थी?

देखने में साधारण, पर किसी चित्रकार के लिए महत्त्वपूर्ण! दो बड़ी तश्तरियों में एक बड़ी कंपनी के बने विविध रंगों के ट्यूब सजाकर रखे गए थे। तीसरी तश्तरी में विभिन्न आकार की कूचियाँ थीं। यह भेंट पाकर रवि वर्मा गद्गद हो उठे। उनकी आँखो मे आनंद के आँसू छलक आए।

महाराजा ने विदा ली। रवि वर्मा भी भाई के साथ स्टेशन रवाना हुए। स्टेशन पर दीवान ने उन्हें एक पत्र भेट किया। यह पत्र महाराजा गायकवाड़ का था। पत्र अंगरेजी में था—केवल दो पंक्तियों का। महाराजा गायकवाड़ ने लिखा था—

डियर राजाजी,

यू आर प्रिंस अमग पेटर्स् एंड पेटर अमग्स प्रिंस।

यूवर्स लॅविंग

सयाजी

अर्थात्,

प्रिय राजाजी,

आप चित्रकारों मे राजुकमार हैं और राजकुमारों मे चित्रकार।

आपका स्नेही

सयाजी

इस प्रकार रवि वर्मा चित्रकारो में राजा यानी सर्वश्रेष्ठ हो चुके थे। उन्होने अपने राजा नाम को भी सार्थक कर दिया था।

रवि वर्मा अपने भाई राज वर्मा के साथ बड़ौदा से बंबई पहुँचे। बंबई पहुंचने पर वे पुराने बंगले में ठहरे। उनके मन मे एक योजना बन रही थी। वे चाहते थे कि बंबई में एक छापाखाना स्थापित किया जाए। इस छापेखाने मे उनके बनाए चित्र छापे जाएँ। इससे चित्रकला का भी प्रचार होगा।

बंबई में उनके अनेक मित्र थे। इनमे कई प्रतिष्ठित लोग थे—जैसे, दादाभाई नौरोजी, न्यायमूर्ति रानाडे। रवि वर्मा ने उनसे भी परामर्श किया। उनके पास थोड़ी पूँजी थी। महाराजा गायकवाड़ ने उन्हें पचास हजार रुपये दिए थे। पर इतनी राशि से प्रेस नहीं खुल सकता था। किसी को भागीदार बनाना आवश्यक था। अंत मे बंबई के एक उद्योगपति पूँजी लगाने के तैयार हो गए। उनका नाम था—गोवर्धनदास माखन जी!

अब क्या था! रवि वर्मा और राज वर्मा छापाखाना खोलने की तैयारी में जुट गए। अपने निवास स्थान की निचली मंजिल में ही उन्होंने छापाखाना खोलने का निश्चय किया। उन्होंने पास का एक मकान भी किराए पर ले लिया। छापेखाने के यंत्र विदेश से मँगाए गए थे। उनके साथ चार जर्मन विशेषज्ञ भी आये थे। इनमें से एक का नाम स्लायसर था। वह थोड़ी-बहुत संस्कृत भी जानता था।

उन दिनो आज की भाँति छपाई नहीं होती थी। तब लिथोग्राफी से छपाई होती थी। इसमें पहले बड़े-बड़े पत्थरों पर चित्र अंकित किया जाता, फिर

शकुंतला : पैर में कांटा लगने के बहाने दुष्यंत को देखती हुई

(साभार : श्री चित्र कला-वीथी, तिरुवनन्तपुरम्)

जर्मन विशेषज्ञ उन पर खुदाई करते। यह बहुत कठिन कार्य था। समय भी बहुत लगता था। पर छपाई बहुत सुंदर होती थी।

शीघ्र ही छापाखाना शुरू हो गया। छापेखाने में देवी-देवताओं के चित्र छापे जाते। बाजार में जाते ही वे चित्र हाथोंहाथ बिक जाते। छापाखाना आर्थिक दृष्टि से सफल हो रहा था।

इसी बीच एक दिन रवि वर्मा को एक जरूरी संदेश मिला। यह संदेश बड़ौदा के महाराजा सयाजी गायकवाड़ ने भिजवाया था। शिकागो में एक चित्र प्रदर्शनी का आयोजन किया जा रहा था। महाराजा गायकवाड़ चाहते थे कि रवि वर्मा इस चित्र प्रदर्शनी के लिए अपने चित्र भेजें।

रवि वर्मा ने महाराजा को सूचना भिजवा दी कि वे नये चित्र बनाकर भेजेगे। पर प्रश्न यह था कि किस विषय पर चित्र भेजें जाएँ। काफी सोच-विचार के बाद निर्णय किया गया। भारतीय जीवन पर आधारित चित्र ही भेजे जाएँ। अब रवि वर्मा ऐसे चित्र बनाने में जुट गए।

इसी बीच एक दिन श्री गोपालकृष्ण गोखले रवि वर्मा से मिलने आए। गोपालकृष्ण गोखने को गांधीजी अपना राजनीतिक गुरु मानते थे।

रवि वर्मा ने बड़े चाव से गोखलेजी को अपना प्रेस दिखाया। फिर अपने बनाए चित्र भी दिखाए।

xxx xxx

बंबई में रवि वर्मा की ख्याति दिनों-दिन बढ़ती जा रही थी। उन्हें शिकागो की प्रदर्शनी मे भी पदक मिला था। उन दिनों स्वामी विवेकानंद शिकागो में ही थे। वे भी इस प्रदर्शनी में गए थे। उन्होंने भी रवि वर्मा के चित्रों को देखा था। उन पर संतोष व्यक्त किया था। इस प्रदर्शनी में रवि वर्मा ने दस चित्र भेजे थे। वे सभी चित्र प्रदर्शन के लिए स्वीकृत कर लिए गए थे।

xxx xxx

एक दिन की बात है।

एक दिन स्वामी विवेकानंद रवि वर्मा के निवास स्थान पर आए। रवि वर्मा के आनंद का ठिकाना नहीं रहा। उन्होंने बड़े आदर के साथ स्वामी जी को अपनी रंगशाला, अपना प्रेस दिखलाया। स्वामीजी बहुत प्रसन्न हुए। वे शाम तक वहीं रहे। इसी बीच आसपास के इलाके मे स्वामीजी के आने की खबर फैल गई। लोग उनके दर्शन के लिए आने लगे।

शाम को स्वामीजी ने रवि वर्मा से विदा ली। स्वामीजी के दर्शन से रवि वर्मा में नया उत्साह जागा। वे और मन लगाकर नये चित्र बनाने लगे।

xxx xxx

सन् 1898 का वर्ष था। यह बंबई और पूनावासियों के लिए महामारी बन कर आया। बंबई और पूना में प्लेग फैल गया। अनेक लोगो की मृत्यु हो गई। इसका असर रवि वर्मा के छापेखाने पर भी पड़ा। उसमे घाटा होने लगा। रवि वर्मा का भागीदार घबराया। कहीं पैसा न डूब जाए। उसने रवि वर्मा से अपने रुपये वापस माँगे। रवि वर्मा स्वाभिमानी थे। वे नहीं चाहते थे कि कोई उन पर शंका करे। कोई अगुली उठाए।

सौभाग्य से उनके पास रुपये थे। उन्होंने उसी समय वे सारे रुपये भागीदार को दे दिए। अब वे अकेले प्रेस के मालिक थे। कुछ देर बाद उनके पास स्लायसर आया। रवि वर्मा ने उसे बताया कि अब वे अकेले प्रेस के स्वामी हैं। इस खबर से स्लायसर भी प्रसन्न हुआ। अब वह अपनी रुचि के साथ चित्र छाप सकता था। अब कोई तगादा करने वाला नहीं था।

उसने रवि वर्मा को एक सुझाव दिया। कहा कि प्लेग के कारण मजदूर कम हो गए हैं। प्रेस को दूसरी जगह कुर्ला ले चलें। वहाँ मजदूर मिल जाएँगे।

रवि वर्मा ने कहा, "ठीक है, तुम जगह पक्की कर लो। मुझे राज वर्मा के साथ मेवाड़ भी जाना है। मेरे लौटने तक नए स्थान पर प्रेस लगा देना।"

इधर स्लायसर नई जगह की तलाश में लग गया। उधर एक दिन रवि वर्मा भाई और पुत्र के साथ मेवाड़ चले गए।

कुछ दिनों बाद जब वे लौटे तो प्रेस नयी जगह स्थापित हो गया था। अब उसके फिर से शुरू होने की देर थी।

इसी बीच एक घटना घट गई। रवि वर्मा को गवर्नर की ओर से एक समारोह मे आने का निमंत्रण मिला। उन्होंने समारोह में जाने की तैयारी शुरू कर दी।

पर ऐन वक्त पर उनका कोचवान बीमार पड़ गया। रवि वर्मा ने राज वर्मा को आवाज़ दी। दोनों भाई उसे बग्घी में बैठाकर अपने पारिवारिक चिकित्सक के पास ले गए। इसी कारण रवि वर्मा उस समारोह में भी न जा सके। पर इसका उन्हें कोई दुख नहीं था। उन्हें संतोष था कि उनके कोचवान को सही समय पर दवा मिल गई। उसका ठीक से उपचार हो गया। समारोह तो होते ही रहते हैं।

पर समारोह में उनकी अनुपस्थिति का बुरा मान लिया गया। गवर्नर के सचिव ने उन्हें पत्र भेजा। पूछा कि वे समारोह में क्यों नहीं आए? इसका तुरत स्पष्टीकरण दें।

रवि वर्मा ने वस्तुस्थिति लिखकर भेज दी। सचिव को सूचित किया कि उनका कोचवान एकाएक बीमार पड़ गया। इसीलिए वे नहीं आ सके।

चार दिन बाद उन्हें सचिव की ओर से फिर एक पत्र मिला। लिखा था— "क्या आपको गवर्नर के समारोह की अपेक्षा कोचवान की बीमारी ज्यादा महत्वपूर्ण लगी।"

रवि वर्मा ने केवल एक शब्द में उत्तर भिजवाया—'हाँ।'

कुछ दिनों बाद रवि वर्मा से मिलने एक पारसी युवती आई। उसका नाम फ्रेना था। फ्रेना को रवि वर्मा और सचिव के बीच हुआ पत्र-व्यवहार मालूम हो गया था। वह रवि वर्मा की मानवीयता से प्रभावित हुई थी। वह उनके लिए पाश्चात्य चित्रकारों के चित्रों के दो एलबम भी लाई थी।

रवि वर्मा उसे जानते न थे।

फ्रेना ने उन्हें अपना परिचय दिया। बताया कि उनके निर्भीक उत्तर से वह कितना प्रभावित हुई है। उसने कहा, "मैं आपके लिए एक छोटी-सी भेंट लाई हूँ।"

रवि वर्मा ने उससे भेंट ली। कागज खोलकर देखा तो एलबम निकले। चित्र देखकर वे अभिभूत हो उठे। उन्होने फ्रेना को धन्यवाद दिया।

इसके बाद फ्रेना अकसर उनसे मिलने आने लगी।

xxx xxx

कुर्ला में प्रेस का काम ठीक से चलने लगा था। पर अब रवि वर्मा का मन ऊब गया था। वे बंबई छोड़ देना चाहते थे।

अब छापेखाने की भाग-दौड़ उनके बस की नहीं रही थी।

पर यह छापाखाना उन्होंने बड़े चाव से लगाया था। किसी अपरिचित को बेचना भी नहीं चाहते थे। अतः उन्होंने अपने जर्मन विशेषज्ञ स्लायसर को बुलवाया। उसे सारी समस्या बतलाई। कहा कि अगर तुम छापाखाना खरीदना चाहते हो, खरीद लो। कम-से-कम तुम चित्रकला के प्रशंसक तो हो। छापाखाना लगाने में तुम्हारी भी मेहनत लगी है। अगर तुम इसे खरीदोगे तो मुझे संतोष रहेगा।

स्लायसर के लिए यह मुँहमांगी मुराद थी। वह रवि वर्मा का बहुत आदर करता था। उनके मन की व्यथा समझ रहा था। पर उसके पास अधिक रुपये न थे। उसने रवि वर्मा को अपनी विवशता बतलाई।

रवि वर्मा ने कहा, "स्लायसर, तुम जानते हो, मैंने रुपयों को कभी महत्व नहीं दिया। तुम इस प्रेस की जितनी कीमत देना चाहते हो, दे दो।"

स्लायसर क्षणभर के लिए सोच में पड़ गया, उसके पास केवल पच्चीस हजार रुपये थे। प्रेस की यह कोई कीमत न थी। उसने हिचकते हुए कहा, "राजा साहब, मेरे पास कुल पच्चीस हजार रुपये हैं। यही मेरी जमा-पूँजी है।"

"बहुत हैं। स्लायसर, आज से यह प्रेस तुम्हारा। यही नहीं। आज तक जितने भी मेरे चित्र इस प्रेस में छपे हैं, उन्हें छापने का अधिकार भी तुम्हें देता हूँ।" रवि वर्मा ने स्नेह से कहा।

स्लायसर उनकी उदारता से अभिभूत हो गया। वह कुछ बोल नहीं पाया। उसका गला रुँध गया।

रवि वर्मा ने कहा, "स्लायसर, अब देर मत करो। जल्दी से लिखा-पढ़ी करवा लो। नहीं तो मुझ पर तरह-तरह के दबाव आएँगे।"

उनकी आशंका सच थी। रवि वर्मा द्वारा प्रेस बेचने की खबर आग की तरह फैल गई। कई ग्राहक आने लगे। पुराने भागीदार भी आए। पर रवि वर्मा ने सबसे कहा, "मैंने स्लायसर को प्रेस बेच दिया है। अब वही उसका मालिक है। वह बेचना चाहे तो मुझे कोई आपत्ति नहीं। और मेरी आपत्ति का मूल्य भी क्या! अब तो मैं इसका मालिक नहीं हूँ।"

छापाखाना बेचकर रवि वर्मा को जैसे मुक्ति मिली। अब वे किलिमानूर लौटना चाहते थे। बंबई से उनका मन ऊब गया था।

एक दिन रवि वर्मा अपने भाई राज वर्मा और पुत्र के साथ किलिमानूर वापस लौट आए। अब वे ही घर के बड़े थे। उन पर ही सबका भार था।

राज वर्मा ने रंगशाला का पुनरुद्धार शुरू कर दिया। वह फिर से जीवंत हो उठी।

रवि वर्मा को अकसर अपने माता-पिता और मामा की याद आती।

दिन कैसे बीत जाते हैं।

इसी किलिमानूर में उनका जन्म हुआ। यहीं वे पले-बढ़े। बड़े हुए। यहीं उन्होने चित्रकला सीखी। कथकली सीखा। माँ से संगीत सीखा। फिर जाने कहाँ-कहाँ घूमे। और अब फिर वही किलिमानूर।

रवि वर्मा प्रातः उठते। स्नान-ध्यान, पूजा-पाठ के बाद अस्तबल में घोड़ों के बीच कुछ समय बिताते। अब उनका परिवार भी बड़ा हो गया था। राज वर्मा की पत्नी। गोदा वर्मा की पत्नी। उनके बच्चे। इनके बीच समय बिताकर वे रंगशाला में जाते। वहाँ कुछ चित्रांकन करते। धीरे-धीरे आठ माह बीत गए। उन्हें पता ही नहीं चला।

रवि वर्मा के पास अनेक स्थानों से निमंत्रण आ रहे थे। अतः एक बार उन्होंने फिर बंबई जाने का निश्चय किया। और एक दिन राज वर्मा के साथ वे पुनः बंबई में थे। वे अपने पुराने बंगले में ही ठहरे। उनसे मिलने अनेक लोग आने लगे। एक दिन स्लायसर भी उनसे मिलने आया। वह उन्हें कर्ला ले गया। छापाखाना पहले की तरह अच्छा चल रहा था। स्लायसर ने उसका नाम नहीं बदला था। वही पुराना नाम था 'रवि वर्मा चित्रशाला।'

सैरंध्री

(साभार : श्री भवानी चित्र संग्रहालय, औंध, सतारा)

यह देखकर रवि वर्मा हँस पड़े।

बंबई में रवि वर्मा ने पुनः अपनी रंगशाला शुरू की। नये-नये विषयों पर चित्र बनाने लगे। इसी बीच मद्रास में फिर चित्र प्रदर्शनी का आयोजन हुआ। रवि वर्मा ने भी उसमें एक चित्र भेजा। शीर्षक था—'हुसेन सागर तालाब।' इस चित्र को 'रजत कीर्ति मुद्रा पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। एक बार फिर प्रसन्नता की लहर दौड़ गई।

xxx xxx

एक दिन की बात है। दादा भाई नौरोजी रवि वर्मा से मिलने आए। उन्होंने उन्हें एक खुशखबरी दी। बताया कि अंग्रेज सरकार उन्हें 'केसरे हिंद' की उपाधि से अलंकृत करने जा रही है। यह सन् 1904 की बात है। दो-तीन दिनों बाद समाचार-पत्रों मे भी यह खबर छप गई। रवि वर्मा को 'केसरे हिंद' की उपाधि से सम्मानित किया जाएगा।

कुछ मास बाद सरकार ने रवि वर्मा को 'राजा' की उपाधि से सम्मानित किया। रवि वर्मा पहले चित्रकार थे, जिन्हें यह उपाधि दी गई थी।

रवि वर्मा शांत रहे। उन्होंने इतना ही कहा, "यह मेरा नहीं, चित्रकला का सम्मान है। मै तो एक साधारण व्यक्ति हूँ। चित्रकला ने ही मुझे इस कीर्ति के शिखर तक पहुँचाया है।"

इस क्षण रवि वर्मा को एक बार फिर अपने माता-पिता, मामा और महाराजा तिरुनाल की याद आ गई। अगर वे सब जीवित होते तो कितने प्रसन्न होते!

लेकिन कुछ दिनों बाद एक दुखद घटना घट गई। रवि वर्मा के छोटे भाई गोदा वर्मा का निधन हो गया। किलिमानूर से बंबई तार आया था। गोदा वर्मा वीणावादक था। बहुत अच्छी वीणा बजाता था। उसके असामयिक निधन से रवि वर्मा टूट से गए। वे राज वर्मा के साथ किलिमानूर जाने की तैयारी करने लगे।

छोटे भाई के बिना किलिमानूर सूना हो गया था। पहले मामा गए, फिर माँ, फिर पिता और अब छोटा भाई। कितनों का विछोह बदा है भाग्य में, रवि वर्मा अकसर सोचते।

किलिमानूर में वातावरण बहुत बोझिल हो गया था। रवि वर्मा हरदम उदास रहा करते थे। राज वर्मा उनकी मनोदशा समझते थे।

इसी बीच एक दिन उन्हें मैसूर के नये महाराजा का निमंत्रण मिला। वे मैसूर में एक नया महल बनवा रहे थे। नाम रखा गया था - जगन मोहन पैलेस। नये महाराजा चाहते थे कि रवि वर्मा इस राजमहल के लिए चित्र बनाएँ। वे अपना पोट्रेट भी बनवाना चाहते थे।

यह सन् 1904 की ही बात है। राज वर्मा भाई की व्यथा जानते थे। वे सोचते थे, मैसूर जाने से भाई का मन बहल जाएगा। रवि वर्मा भी यही सोच रहे थे। उन्होंने महाराजा का निमंत्रण स्वीकार कर लिया।

मैसूर में दोनों भाइयों का भव्य स्वागत किया गया। उन्हें शेषाद्रि हाउस नामक एक हवेली में ठहराया गया। उनकी सेवा के लिए अनेक सेवक रखे गए। राजमाता प्रतिदिन दोनों भाइयों के लिए फलों की टोकरी भेजा करतीं।

रवि वर्मा दिन में चित्र बनाते। शाम को संगीत-नृत्य की सभाओं में जाते। कभी-कभी दोनों भाई चामुंडा पहाड़ी की ओर घूमने निकल जाते। एक दिन वे टीपू सुलतान की राजधानी श्रीरंगपट्टनम् भी गए।

रवि वर्मा ने जगन मोहन पैलेस के लिए जो चित्र बनाए। ये चित्र रामायण, महाभारत और भागवत के प्रसंगों पर आधारित थे।

रामायण के प्रसंगों के आधार पर रवि वर्मा ने चित्र बनाए—

'धनुष-भंग', 'जटायु-युद्ध', 'इंद्रजीत-विजय' और 'सेतु-बंधनम्'।

महाभारत के आधार पर बने चित्र थे— 'दमयंती और हंस', 'भीष्म प्रतिज्ञा', 'सैरंध्री' और 'दूत के रूप में श्रीकृष्ण'।

भागवत के आधार पर उन्होंने 'वसुदेव और देवकी की मुक्ति' का चित्र बनाया।

लेकिन इन चित्रों के चित्रांकन में एक बहुत बड़ी बाधा भी आ गई।

हुआ यह कि अचानक राज वर्मा की तबीयत खराब हो गई। पता चला, उनके पेट में ट्यूमर है।

रवि वर्मा घबरा गए। उनकी आँखों में आँसू बहने लगे। राज वर्मा से उन्हें अत्यधिक स्नेह था। वह उसे बेटे की तरह चाहते थे।

उन्होंने मैसूर के महाराजा को अपनी परेशानी बताई। वे बोले, "राजा साहब, घबराइए नहीं। आप मद्रास जाइए। वहां मेरे परिचित एक कुशल सर्जन हैं। वे आपरेशन कर देंगे। मैं मद्रास में आपके ठहरने की सारी व्यवस्था करवा दूँगा।"

"पर आपके चित्र!"

"चित्र तो बाद में भी बन जाएँगे। पहले आप अपने भाई की चिकित्सा कराइए।"

xxx xxx

रवि वर्मा बीमार राज वर्मा को लेकर मद्रास पहुंचे। डॉक्टर से मिले। डॉक्टर ने राज वर्मा को देखा। वह चिंतित हो उठा। बीमारी साधारण न थी। फिर भी उसने राज वर्मा को ठीक करने की पूरी कोशिश की। पर बीमारी बहुत बढ़ चुकी थी। राज वर्मा को बचाया नहीं जा सका।

रवि वर्मा पर तो जैसे दुख का पहाड़ टूट पड़ा। राज वर्मा का निधन उनके लिए अपूरणीय क्षति थी। एक वही तो शेष बचा था।

रवि वर्मा स्वयं को असहाय समझने लगे।

मद्रास में उनके अनेक परिचित थे। सबने उन्हें सांत्वना दी। कहा, "राजा साहब, धैर्य रखिए। अब सारे परिवार का भार आप पर ही है। आप हिम्मत हारेंगे तो कैसे काम चलेगा!"

रवि वर्मा ने भारी हृदय से भाई की अंत्येष्टि की। फिर उसका अस्थिकलश लेकर किलिमानूर रवाना हुए।

वहां उनसे अपने भाइयों की विधवा पत्नियों का दुख देखा नहीं जाता था। फिर मैसूर में महाराजा के महल के चित्र भी अधूरे पड़े थे। किलिमानूर में एक मास रहकर वे फिर मैसूर लौटे। इस बार उनके पुत्र राम वर्मा साथ थे।

रवि वर्मा ने दो महीने में सारे चित्र पूरे कर दिए। सभी चित्र प्रभावपूर्ण बन पड़े थे। पता ही नहीं चलता था कि इनके चित्रकार को कितनी पीड़ा से गुजरना पड़ा है।

कार्य पूरा करने के बाद रवि वर्मा ने किलिमानूर लौटने की तैयारी शुरु कर दी।

एक दिन महाराजा ने उनसे कहा, "राजा साहब, कुछ समय बाद सम्राट पंचम जॉर्ज आ रहे हैं। वे यहाँ कुछ समय रहेंगे। हाथियों को पकड़ने का कार्यक्रम 'खेड़ा' भी देखेंगे। मेरी इच्छा है कि इस अवसर पर आप भी रहें।"

रवि वर्मा ने उत्तर दिया, "महाराज, मेरा स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता। फिर भी प्रयत्न करूँगा कि आऊँ।"

रवि वर्मा स्वय कष्ट उठाकर भी दूसरों की बात रखते थे। यद्यपि उनका स्वास्थ्य ठीक नहीं था। मन भी नहीं था। भाई के विछोह का दुख अभी भी उन्हें व्यथित किए दे रहा था। पर महाराजा का आग्रह था, वे अपनी व्यक्तिगत पीड़ा भूल गए। नियत तिथि पर वे मैसूर पहुँच गए।

महाराजा ने रवि वर्मा की सुख-सुविधा का पूरा ध्यान रखा। उन्होंने विदेश से एक कार मँगवाई थी। यह कार उन्होने रवि वर्मा की सुविधा के लिए दे दी।

मैसूर में सम्राट पंचम जॉर्ज आए। उनका भव्य स्वागत किया गया। महाराजा ने उनसे रवि वर्मा का परिचय कराया।

फिर वे सब एक दिन हाथियों का खेड़ा देखने निकल पड़े।

सम्राट पंचम जॉर्ज के प्रस्थान के बाद रवि वर्मा भी किलिमानूर लौट आए। वे बुरी तरह थक गए थे। शरीर भी जैसे जवाब दे रहा था। उन्हें मधुमेह की शिकायत थी। इसके लिए वे आयुर्वेदिक औषधि ही ले रहे थे।

सन् 1906 में रवि वर्मा की बड़ी पौत्री का विवाह त्रावणकोर राजघराने में हुआ। उसका नाम था—रानी सेतु लक्ष्मी बाई। उन्होंने बीमारी के बावजूद विवाह-समारोह में भाग लिया। तिरुवनन्तपुरम् में वे तीन मास रहे। इसके बाद वे कोटोल्लम गए। वहाँ वे एक आश्रम बनाना चाहते थे।

अपनी 57वीं वर्ष गाँठ पर ही उन्होंने एक घोषणा कर दी थी। 60 वर्ष पूरे करने के बाद वे संन्यास ले लेंगे। एक आश्रम बनाकर उसमें रहेंगे। पर उनकी बीमारी बढ़ती गई।

इसी बीच उनके बायें कांधे में कारबंकल का फोड़ा निकल आया। दरबार के चिकित्सक ने उसमें चीरा लगाया। उससे उन्हें थोड़ा आराम मिला। पर फोड़ा पूरी तरह ठीक नहीं हुआ।

इसी बीच रवि वर्मा की बीमारी का समाचार सारे देश में फैल गया।

अंतर्राष्ट्रीय समाचार एजेंसी रायटर ने तो उनकी बीमारी का हाल देने ले लिए किलिमानूर में शिविर ही स्थापित कर दिया।

रवि वर्मा के प्रशंसकों और हितैषियों में चिंता व्याप गई। सब उनके स्वास्थ्य-लाभ की कामना करने लगे।

रवि वर्मा के एक मित्र श्री एम. केशव जोशी बंबई से आ गए थे। वे भी रवि वर्मा की देखभाल करते।

बंजारे

(साभार : श्री चित्रकला दीर्घा, तिरुवनन्तपुरम्)

रवि वर्मा हँस कर उनसे कहते, "जोशी, चिंता मत करो। बस, यह फोड़ा ठीक हो जाए। मैं तुम्हारे साथ ही बंबई चलूँगा। तुम्हारे प्रेस का उद्घाटन करूँगा।

बीमारी से ध्यान हटाने के लिए उन्होंने फिर से चित्रांकन का सहारा लिया।

वाणभट्ट संस्कृत के महान कवि थे। उनकी प्रसिद्ध रचना है– कादम्बरी! रवि वर्मा कादम्बरी के कुछ प्रसंगो पर चित्र बनाना चाहते थे।

उन्होंने चित्र-फलक पर कैनवास लगाया। फिर आकृतियाँ खींचीं। नमे रंग भरने के लिए कूची उठाई। पर कूची उनके हाथ से गिर पड़ी।

ऐसा कभी नहीं हुआ था।

क्या यह कोई संकेत था!

शायद!

कारण रवि वर्मा की दशा तेजी से बिगड़ती गई। अब उनका अंत समय आ गया था।

उन्होंने परिवार वालों से कहा, "अब विदा लूँगा। मुझे दूर्वा पर लिटा दो।"

उनकी इच्छा पूरी की गई।

ब्राह्मण आ गए। वे वैदिक मंत्रों का उच्चारण करने लगे।

रवि वर्मा ने भी मंत्रोच्चार की कोशिश की। पर स्वर निकल नहीं पाए।

यह 2 अक्तूबर, 1906 की दोपहर की बात है।

इसी दिन रवि वर्मा ने संसार से सदा-सदा के लिए विदा ले ली। पर वे अमर हैं!

अपने चित्रों के रूप में वे सदा जीवित रहेंगे।

राजा रवि वर्मा के कुछ रंगीन चित्र

इस पुस्तक में बीच-बीच मे रवि वर्मा के प्रतिनिधि चित्रों को छापा गया है। छपाई की सुविधा की दृष्टि से उन चित्रों को उनके मूल रंगों में न देकर श्वेत श्याम छवि के रूप में मुद्रित किया गया है। यथास्थान चित्रों का सक्षिप्त परिचय भी दे दिया गया है।

पाठकों को रवि वर्मा के रंग-संयोजन की एक बानगी देने के लिए और मूल चित्रों का रसास्वादन कराने की दृष्टि से यहाँ उनके छह चित्रों को रंगीन छवि के रूप में पुनर्मुद्रित किया जा रहा है। इसका मुद्रण मूल पेंटिंग से कर पाना संभव न था इसलिए हमने मुद्रित चित्रों को यहाँ पुनर्मुद्रित किया है। इस द्रविड़ प्राणायाम के कारण छोटे आकार मे छपे इन चित्रों को देखकर वह आनंद तो नहीं प्राप्त हो सकता जो बड़े आकार में बनी मूल पेंटिंग को निरख कर मिल सकता था। फिर भी इनसे रवि वर्मा की चित्रकला की सराहना में सहायता मिलेगी।

राजा रवि वर्मा ने रामायण, महाभारत, भागवत् एव पुराणों का विधिवत अध्ययन किया था। उनके मन में बार-बार यह बात आती कि इन ग्रंथों में चित्रांकन के लिए अपार विषय हैं। क्यों न यूरोपीय चित्रांकन शैली का उपयोग कर इन विषयो पर चित्र बनाए जाएँ।

और उन्होंने पौराणिक प्रसंगों को चित्रों में उतारना शुरू कर दिया। उन्होने कालिदास के 'अभिज्ञान शाकुंतलम्' का एक प्रसंग चुना। शकुंतला अपने आप में खोई हुई दुष्यंत को प्रेम-पत्र लिख रही है। 'शाकुंतलम्' से प्रेरित उनका यह पहला चित्र था। इस चित्र को एक प्रतियोगिता में गवर्नर जनरल का स्वर्णपदक मिला।

सर मोनियर विलियम्स ने 'शाकुंतलम्' को अंग्रेजी में रूपांतरित किया था। उन्हें यह चित्र इतना अच्छा लगा कि इसे उन्होने अपनी पुस्तक में छाप दिया। इस प्रकार इस चित्र को अतर्राष्ट्रीय ख्याति मिली।

राजा रवि वर्मा में धार्मिक संस्कार बड़े प्रबल थे। वे श्लोकों और मंत्रों का पाठ भी करते थे। जब वे वंदना करते तो उन्हें लगता कि देवी-देवता उनके पास आ गए हैं। अपने ध्यान में रवि वर्मा इन देवी-देवताओं के रूप-स्वरूप की कल्पना करते। उन्होंने अनेक देवियों का चित्रांकन किया विशेष कर सरस्वती और मुकुम्बिका देवी का।

तरुणाई के दिनों में एडवर्ड मूर की एक पुस्तक रवि वर्मा के हाथ लगी। उसमें बाल्य लीलावतार श्रीकृष्ण का भी एक चित्र था। इस चित्र को देखकर वे अत्यधिक पुलकित हो उठे। आगे चलकर उन्होंने श्रीकृष्ण के जीवन से संबंधित अनेक प्रसंगों पर अपनी शैली में चित्र बनाए। यहाँ दिया गया चित्र राधा के मान को दर्शाता है।

कहते हैं कि चित्रकला के प्रसिद्ध सिद्धांत *'प्रिंसिपल ऑफ पर्सपेक्टिव'* की शुरुआत रवि वर्मा ने ही की। उनके अधिकांश चित्रों में यह सिद्धांत परिलक्षित होता है।

पौराणिक प्रसंगों के साथ-साथ मध्यकालीन वीरों की गाथाएँ भी रवि वर्मा को बहुत रोमांचित करती थीं। यथार्थवादी शैली में बना शिवाजी का चित्र प्रभावित तो करता ही है साथ ही अनेक सूक्ष्म विवरणों को भी प्रस्तुत करता है।

रवि वर्मा की रंगशाला में देवियों और स्त्रियों के चित्रों की भरमार थी। विशेषकर नायर जाति की स्त्रियों के अनेक सुंदर चित्र उन्होंने बनाए थे। सन् 1873 की चित्र प्रतियोगिता में रवि वर्मा को जो स्वर्णपदक मिला था वह 'एक नायर स्त्री' चित्र के लिए ही था।

सन् 1874 में उन्हें पुनः चित्र प्रतियोगिता में स्वर्णपदक मिला। इस बार यह पुरस्कार उन्हें 'वाद्य यंत्र बजाती हुई तमिल युवती' के लिए मिला था।

शकुन्तला

सरस्वती

मानिनी राधा

मन्दोदरी

शिवाजी

कादम्बरी